पथ-पाथेय

प्रदीप कुमार
सम्पादक निर्देशक



समानांतर प्रकाशन
7/7 दरियागंज, नई दिल्ली-110002

पथ-पाथेय

स्वर्ण प्रभा

मूल्य पैंतालीस रुपये प्रथम सस्करण 1984
PATH PATHEY (*Poetry's Collection*) *by* SWARAN PRABHA

भाई ब्रह्मस्वरूप जी को
जिन्होंने रामायण द्वारा सृजन के बीज रोपे

भूमिका

कुवारे कलेवर स्वण प्रभा का पहला कविता सग्रह था । यह सग्रह आज से कुल 13 वप पहले प्रकाशित हुआ था । तब से वे आज तक निरतर लिखती रही हैं और फलस्वरूप पथ पाथेय नामक दूसरा सग्रह हमारे सामने आ रहा है । कुवारे कलेवर के प्रति अपनी शुभकामनाए प्रकट करते हुए श्री सत्यकाम जी विद्यालकार ने कहा था कि इस सग्रह की कुछ कविताए तो ऐसी भी है जो अच्छे स अच्छे काव्य सग्रहा की शोभा बन सकती है । उनके इस दूसरे सग्रह के बार मे भी यह बात लागू है ।

स्वण प्रभा जी की कविताओ का सबसे बडा गुण उनकी सहज मानसिकता है । सरल और सहज मे अतर करना चाहिए । जो स्वयस्फुत और भीतर से आया है वह सहज है उसमे किसी प्रकार की अस्वाभाविकता नही होती, जिस तरह पहले कविता सग्रह की कविताए कृत्रिमता से अछूती थी उसी प्रकार इस सग्रह की कविताए भी किसी प्रकार की भी खीचतान का आभास नही देती है ।

दूसरी बात जो मुझे श्लाघ्य लगी वह है उनका छद के प्रति सहज रुझान । आज की अधिकाश कविता ने छदविहीन होकर और चाहे जो कुछ पाया हो मन मे उतर कर बस जाने की अपनी खूबी को खो दिया है । कई बार ऐसा जान पडता है कि कविता को थोडा बहुत ही क्यो न हो छदहीनता और लयहीनता की ओर से विमुख करना पडेगा । अगर ऐसा नही हुआ तो वह किताबा मे छपी रह जायेगी उसे उद्धृत करत हुए कभी नही सुना जायगा । बातचीत मे आज का हिंदी कवि भी उदू के शेर या हमारे पुराने समय कवियो के दोहे आदि उद्धत करता है । नई कविता तो केवल समीक्षा करते समय किताब खोलकर उद्धत की जाती है । यह एक चितनीय अवस्था है ।

स्वण प्रभा जी के इस सकलन मे एक भी छदहीन कविता नही है । मैं इसे अपने आप म एक शुभ पथ और शक्तिशाली पाथेय मानता हू ।

कविताओ की श्रेष्ठता के विषय मे चलते चलते कुछ कह देना ठीक नही है । इतना अवश्य कहना चाहूगा कि अधिकाश कविताए पढते हुए मन उसमे रमता है भले ही कई जगह विषय एकदम आधुनिक है—जसे टेबिल लैंप, वद कमरा, पेट की भट्टी या रोटी के टुकडे, किंतु उनमे किसी प्रकार की कुठा या आक्रोश है नही, अगर ढूढना है और इसलिए उनमे वाद भले ही दिखाई दे विवाद दिखाई नही देता है । ज्यादातर कविताए प्रकृति पूजा और प्रेम से सबधित हैं । कई कविताए ऐसी भी हैं जिनकी भावना न सही अभिव्यजना का ढग काफी पुराना

है। यह भी सभव है कि आज के अत्यत नयेपन के बीच यह लगभग पुरानी कविताए कई पाठका को अपने अधिक पास की लगें।

कविता के बारे म सबसे बडी बात यह है कि कवि उनके माध्यम से लेने के लिए निकला है या देने के लिए। मैं मानता हू कि जो कविता समर्पित होकर लेने की भावना से उपस्थित होती है वह कुछ देने के दम से निकलने वाली कविता की अपेक्षा श्लाघ्य है, पथ-पाथेय की सभी कविताए समर्पण भावना की प्रभा से आलोकित ह। इसलिए मुझे लगता है कि स्वण प्रभा जो आग पीछे सभी प्रकार के पाठका को रुच सकने वाली कविताओ की रचना करेंगी। मुझे इसम बिल्कुल सदेह नही है कि यह सग्रह काव्य प्रेमियो को प्रिय लगेगा।

—भवानी प्रसाद मिश्र

राजघाट कालोनी
नई दिल्ली

दो शब्द

'पथ-पाथेय' में पथ का पाथेय ही है।

जीवन इतना विस्तृत है कि इसमें हर पल कुछ न कुछ आता जाता ही रहता है। इसी के कुछ क्षण, जो रचना में बांध सकी, आपके सम्मुख हैं।

रचना का बाना पहन कर भी ये क्षण कितनी पूर्णता पा सके हैं, यह संदिग्ध है। जो कहना चाहती थी कहकर भी न कह पायी अततोगत्वा जो कहा गया, उसी पर संतोष कर लिया। एक अंश ही हाथ लगा है।

सबके अनुभव अलग-अलग होते हुए भी उनकी पथ्यों एक है। अतः मेरी यह इच्छा स्वाभाविक ही थी कि अनुभवों का आदान प्रदान हो। आदान प्रदान के हेतु आवश्यक सामग्री जुटा पाना मेरे लिए आसान न था। इस युग की तड़ित-गति के साथ डग भरने का साहस मुझ में न था, यही कारण है कि मेरी रचनाएँ मेरी ही सीमा में बद्ध होकर रह गयी।

अपनी रचनाओं के विषय में मैं इतना ही कहना चाहूंगी कि इनमें झेले भोगे, कड़वे मीठे वे प्रसंग हैं जो आसानी से कह भी नहीं जा सकते।

इनमें कुछ स्मृतियां है जो विस्मृति के गर्त में दब न सकीं, कुछ चरित्र हैं जो कृतित्व के नायक-नायिका बन बैठे कुछ घटनाएं है जिन्होंने स्तंभित किया, कुछ दृश्य हैं जो आंखों पर अंकित हो गये, कुछ जग-बीती है जो आप बीती कहलाई और कुछ आभास है जो अंतस में फूट कर वह निकले।

कविता की कौन सी कड़ी सर्वाधिक प्रिय है, यह कहना मेरे लिए कठिन है।

'पथ पाथेय' के पाठकों से मेरा नम्र निवेदन है कि रचना के शाब्दिक अनाकपण को अनदेखा कर उसकी आत्मा तक जायें और मुझे अनुगृहीत करें, कृत-कृत्य करें।

रचनाओं को संकलन की रूपरेखा देने तक की राह में जिन महानुभावों का सौहार्द्र प्राप्त हुआ है उनमें श्री जनेंद्र कुमार और श्री भवानी प्रसाद मिश्र जी का नाम अग्रणी है। श्री रामेश्वर शुक्ल 'अचल' व श्री सत्यकाम विद्यालंकार जी के उत्साहवर्धक शब्दों ने मुझे रचनाकार की श्रेणी में जोड़ लिया। मैं किन शब्दों में इनका आभार व्यक्त करूं?

हितैषी गुरुजनों से आशीष व उत्साह मिलता रहा तो मैं निज से आशा करूंगी कि आगामी जीवन में कुछ पा सकूं, कुछ दे सकूं, मेरे हेतु यही जीवन का सार हो।

वंदना है, उस सर्वशक्तिमान से।

—स्वर्ण प्रभा

परिचय

परिचय मेरा बडा अकिंचन सीमित चार दिवारो तक
मै उस जग को क्या दूगी जो पहुँचा चाँद-सितारो तक

टूटे फूटे शब्द सजाकर अल्हड दुल्हन भावो की
आलोकित जग आगन मे आ जाती है सकुचाई-सी

गीत न ऐसे गा पाती वह जिनको जग स्वीकार करे
अपने रागो को अलाप देती अपनी ही ताली से

यह तो कुछ किरणे विचार की आती मन के लोको से
खीच क्षीण रेखा प्रकाश की खो जाती सूने पन मे

कितने भाग्यहीन है वे स्वर ताल नही अधिकार जिन्हे
कैसे गीत कहूँ श्रोता का मिलता नही दुलार जिन्हे

यह तो कुछ सुर हैं अभाव के छिडते जो जब-तब रहते
पर होठो तक आते-आते कभी-कभी थक-थक जाते



वन्द कमरा

एक वन्द कमरे मे मेरा सारा जीवन वीत चला
कभी मुक्ति होगी इससे, इस आशा का घट रीत चला
किसी भाग्य-दृष्टा ने कोई जेल वताई नही कभी
फिर भी वधन ही वधन का जीवन भर सगीत चला

अब तो चीजे विखर गई है, टूट गई उत्साह- लडी
कभी सजाने की कोशिश की थी, सारी साधें उखडी
कील नही गडतो है कोई, चित्र नही टँक पाते है
जिन परदो को अटकाया था, वह भी सर पर आते हैं

खूटी नही यहा पर कोई अल्मारी का दौर नही
कोट पेंट बुशट तहा कर रखने का भी ठौर नही
फिर भी जग वाले मुझ को खाता पीता वतलाते हैं
क्या सारे खाते पीते भीतर ऐसे दुख पाते हैं

इन खडरातो से अच्छी होगी कुटिया निखरी सुथरी
जहाँ दिखावा छल न सकेगा जहाँ शान्ति होगी विखरी
कब तक लाज निभाऊँ जग की, अपने हाय वडेपन की
कैसी टेक जिसे रखने मे, वलि दे दू मैं जीवन की



फटे-चीथडे

फटे चीथडे टके अलगनी मुंह लटके दानो के खटके
रोली चावल खील वताशे हटडी कुरहड दीवे मटके
माटी की मूरत गणेश जी, लक्ष्मी जी को आएँ कहा से
लक्ष्मी जी की पूजा के हित नर नारायण पाएँ कहा से

सच है लक्ष्मी तेरी ही तो पूजा होती है घर-घर मे
जिस घर मे तू नही, कहा से रौनक हो पाए उस घर मे
और कहाँ से पूजा हो तेरी तुझसे ही जो होती है
जागी आज अमावस्या, दीपावलि मेरी क्यू सोती

फिर भी लगन लगी है तुझसे पूजन से कुछ पहले आजा
वीत न जाए वर्ष कही सूना इतनी सी आश दिलाजा
विधिवत् पूजन करते हैं जो, उन पर ही सोना वरसा जा
पर मैं जग की लाज निभालू वस इतना सा साज सजा जा

▭

नर-नारायण

इस गरीब के घर में तुम भी
सूने-सूने रह जाते हो
कमे हो भगवान समय पर
मेरे घर मे कम खाते हो

साथ दे रहे हो क्या कम है
बडे-बडे दुख-सुख सह सहकर
कोई कभी कुछ भी कह जाता
मर्ति बने से रह जाते हो

ऐसे कठिन समय मे नर का
नारायण ही साथ दे सका
इन्ही भ्रमो के आधारो पर
टिके टिके से रह जाते हो

कसे तेरे साज सजाऊँ
कसे तुझ पर फूल चढाऊँ
कैसे बात बनाऊँ जिन पर
तुम्ही ठगे से रह जाते हा



पेट की भट्टी

पेट की भट्टी मे स्वर्ण भी गल गया
धातु का कठोर तत्व राख मे बदल गया
शनै शनै वस्तु भार किंचित मे ढल गया
उपकरण, हविष्य-होम हेतु पथ छल गया

सृजनात्मक पक्ष ह्रास पक्ष मे बदल गया
नव विचार शब्द-कोश खाद्य मे मचल गया
साहित्यिक सागर की सुषमा के सीप का
बन्द बिन्दु आँच खा अममय पिघन गया

क्रान्ति का विराट रूप धूमिल हो ढल गया
गंध रस पराग वर्ण तिल तिल कर जल गया
एक-एक आवरण झीना हो गल गया
मुख खुला रहा कि तीन-लोक ही निकल गया

▭

रोटी के टुकड़े

रोटी के टुकड़े पर तेरी सारी माया छूटी है
फिर भी यह अनमोल जवानी तुझ पर कैसी फूटी

पेट भरा नहीं एक सांझ भी
तृप्ति सदा से रूठी है
दूध दही मक्खन की बातें
तेरे लिए अनूठी हैं

फिर भी तेरी तरुणाई ने
गोल निठुरता पाई है
फिर भी तेरे कृष्ण वर्ण पर
चिकनाई-सी आई है

हंडिया तवा पतीली भी
छोटी कड़छी भी टूटी है
फिर भी तेरे हाथ बनाते
ज्वार भाखरी माटी है

गारे चने पर पत्थर पर
सिकती तेरी रोटी ह
फिर भी तेरी काली अलकें
क्यों घुटनों तक छूटी हैं

बालक साया एक डाल पर
फटे चीथड़ा का झूला
नहीं जगाने पर दुलराया
गया न लोरी पर सोया

यह भी पल जाएगा ऐसे
जैसे तू पल पाई है
लगता है यौवन से जीवन
की बिन मोल सगाई है

सभी रोक लेंगे हम सब ही
पर न कहीं रुक पाई है
यह निर्द्वंद दिशा जब भी जा
कहीं उभर कर आई है



काला-मैला

काला मैला फटा घिनौना
यह गरीब का छोटा छौना
पोस्ट-वाक्स के पीछे वठा
उस काले कुत्ते से डरकर

टीन डाल्डा वडा, मटर के
दाने पतले पानी मे से
वीन एक चित दाने चुगता
छोटे पडते हाथ तली से

किसका छौना नही सलौना
आखो मे वूढो का वाने
लगता है इसको कुछ ज्यादा
सिखा गई है इस की आँतें

एक रेस्तराँ रम्वा-सम्वा
वीयर व्हिस्की जिन पचरगा
कॉफी चाय पुलाव अडगा
खुली आख का एक अचम्भा

भीड भाड फैशन अधनगा
वीटल् प्रदर्स ढमा ढम ढगा
नौजवान भालू वदगा
कुछ पाने का गोरख धधा

क्यो न वजे फिर युग की घटी
जागरुक है अव हर प्रहरी
□

कडवा न बोल

दिन निकल जाते हैं
बात रह जाती है
बीत नहीं पाती जो
बात ही वह थाती है
भावों की उग्रता में
संयम को खोकर
क्षणिक रक्त वेग में
कडवा न बोल नर

धीरज को तोल कर
कडवा न बोल नर

मौसम बदलते हैं
रात कभी आती है
ऊषा की लाल आंख
आंसू छलकाती है
यादों की ओढनी
रुई-सी धुन जाती है
रह-रह कर अपनी ही
बात याद आती है

हो न सका संयम
कडवा न बोल नर

व्यथ के वढाने मे
वात विगड जाती है
छोटी सी जिदगी
ताड सो वन जाती है
दुखो के वोझे को
दूना वढाने से
सुखो के यौवन की
रीढ ही झुक जाती है

वीतकर न आए क्षण
कडवा न बोल नर



टेबिल लप

टेबिल लैंप न ला पाई मैं

युग बीता बस यही सोचकर
सोतों को मैं दुख दूं क्योंकर
इसी सोच में बल्ब न बाला
मन की बात न कह पाई मैं

टेबिल लैंप न ला पाई मैं

दिन भर मेरे भाव न जागे
थे मजबूत भूख के धागे
रोजनामचों के पन्नों पर
दिल के दर्द न लिख पाई मैं

इन्हीं उलझनों में दिन बीते
दिन क्या, कितने जीवन बीते
कितने हाथ गये थे रीते
जिनके नाम न गिन पाई मैं

कब कम होगी कल की दूरी
कभी मिटेगी यह मजबूरी
कोस भाग्य का या कि सदा ही
कला रहेगी यहां अधूरी

इसका मर्म न गह पायी मैं
टेबिल लैंप न ला पाई मैं

कहने को है बात जरा सी
ओछी छिछली एक टका सी
इन्हे जोड पर वनते जीवन
जिसको झूठ न कह पाई मैं

टेंविल लप कि ताज महल ये
जिसे न अब तक पा पाई मैं



मानव की रचनाएँ

जहा शान्ति पाई नर ने मैं वह मन्दिर की प्रतिमा हू
मूर्ति कहाता हूँ प्रस्तर हूँ मानव की ही रचना हूँ

राया वह चरणो मे आकर गिरा फूल भी बरसाये
श्रद्धा युक्त सुफल मेवा घृत धूप दीप अचन पाए
पर सब स्वार्थ सुरा मे वेष्ठित गीत सुमगल जो गाए
तिल तिल कर मैं हुआ मूर्त सवेदन शब्द न पर आए

रचकर मुझे मुझी से पुजवाता है अपने मन की आस
जैसे गढा गया हू केवल सुन पाने को सारे श्वास
जैसे गढकर मुक्त हुआ हो शाप किसी वर ज्ञानी का
जैसे मेरा रूप बना हो कलि के हाथ सुदानी का

क्या हू क्या दे पाया है जग मुझे राह से उठवाकर
चोटें मार अनेको चाहत के अनुरूप सुधरवाकर
यह आकार असीमित, सीमित कर चादी मे मढवाकर
मौन शिला को नेत्र दिए एकान्त भवन मे बिठला कर

देख रहा हू तीन लोक मैं अविनाशी हू सृष्टा हू
देख रहा हू गत आगत सब क्याकि दिव्य मैं दृष्टा हू
काट सकू बधन विधान के जिनका स्वय नियता हू
क्योकि गढा जाकर नर कर से ही इस पद का भुक्ता हू

और न जाने क्या-क्या कहने कितने दीन दुख आते
ताप भरे अश्रु कण लेकर जिनसे वज्र पिघल जाते
अपने ही भावो की गागर मुझ पर सब उडेल जाते
आह विवशता मेरी सब कुछ सुनकर होठ न हिल पाते

पर आता असमर्थ बना जो वह समर्थ बनकर जाता
सरल पाता स्वयं कि वह सब प्रश्न चिह्न यह रह जाता
क्या मानव ने मानव मन को रूप दिया है आकृति में
अथवा लक्ष्य बनाया मुख का दुष्कर द्वंद अनावृति में

अगणित प्रश्न अगम से आकर यहीं निगम में खो जाते
रचने वाला कौन न जाने क्या-क्या खेल रचे जाने
यह मेरा अस्तित्व यहां है किसी हृदय का सपना हूं
शक्ति कल्पना तक सीमित हूं सजता हूं पर अपना हूं

जहां शान्ति खोजी नर ने
मैं वह मानव की रचना हूं

पेड की परछाँई

पेड की परछाँई मेरे कमरे मे आती है
कोरी दीवार रोज रात मिल मिनाती है
रात का है रग मगर नक्श कितने सुन्दर हैं
कैसी बारीकिया मे बात बना जाती है

मेरा यह घर यही रीत चली आती है
है तो किराए का पर बात सी रह जाती है
चौथी मज्जिल है जो अब तीसरी कहलाती है
लिफ्ट है वो साधन जो दूरिया मिटाती है

कहने का तीन ही है रूम मगर सुन्दर है
सुन्दरता लीप पोत से न जानी जाती है
दृष्य हैं जा करते है मानस को मुखरित
कुहरे की धु ध कई चीज जगा लाती है

ऐसे ही सनन सनन पत्तो का रास यह
डालियो की सनन सनन फूलो की वास यह
जिदगी को जीने की देती बधाई सी
हरियाली आखो को कितना लुभाती है

नटखट है जीव यहा चिडिया गिलहरी भी
चाय चाय च् चूं मे मस्ती जताते है
कौओ के झु ड जैसे करते शरारत है
कांव काव भूलो के सदेशे लाते है

सामने की छत पे वहा पेडो से कूदकर
तीन हैं लगूर जो दोपहरी मे आते हैं

आख थचा बुढिया की छोटी सी पाती को
सूखती उस गुदडो की रुई उडा जाते हैं

यास भी खडकते है हू हा भी होती है
मारने भी दौडते है चाट भी खाते है
पर ये जा विगडे है राम के दुलारे से
नकले उतारकर तट पड पर चढ जाते है

और अपने छज्जे मे झूमती इन डालियो को
देखकर मैं सोचती हू जान लेंगे जिस दिन
सीता सी कोई यहा रहने को आई है
कगन या मुंदरी निशानी बनेंगे उस दिन

जानते नही है न वो राम ह न सीता है
बीत रहा युग कितनी पैनी रफ्तार से
भावना वो जिसमे थी कडिया लगाव की
कभी कभी रोकती है धार को कगार से

सब कुछ है वैसा ही इनकी निगाहो मे
आख मे जो आँख है वो इन तक न पहुँची है
सागर को जगल की देते गवाही है ये
बात मे जो बात है वो इन तक न पहुँची है



अनगिनत सूरतें

अनगिनत सूरतें आती हैं जाती हैं
शान्ति की स्थिरता कहीं-कहीं टिक पाती है
टिमटिमाती बाती की लौ की ललक में
हल्की-सी खुलती जो दातों की पाँती है
कितने ही खाए से बोझिल इसानों का
झलकी यह शान्ति की शाति दे जाती है



कगन की खनक

कहा खनक कगन की और खनक बिछवो की छुन छुन बोली
कहा झनन झन लच्छो की, पायल की रन झुन आगन डोली
कहा करधनी के लचकीले लाल भरे गुच्छो से अनजन
और कहा वह नार, सहज मुख देख आरसी आँजे अजन

कहाँ रचाये मेहदी हाथ, महावर पाँव, भाल म रोली
कहाँ लाजवन्ती पलक, झुक जनम-जनम अधिकार न बोली
कच्चे धाग बुने कहाँ पर दुलहन की नवरग हिडोली
कहाँ उन्ही पर सभल-सभल डग धरें आस्थाओं की टोली

कहाँ प्रणय के आधारो पर अकित स्वग भित्ति की वली
कहाँ दशना की देहरी पर हुए विकपन की रग-रेली
कहाँ साम्य का भाव, मोक्ष का जो देता आभास अनन्तर
कहा त्याग प्रतिमा सुलगणी, अपने पथ पर बढे निरतर

कहाँ आरती की थाली वह, सुमन सजाए श्रद्धाधन के
झुक नम भेट करें गृहदेवो के चरणा पर माणिक-मनके
कहाँ नाथ की माया बनकर, छाया साथ वनो मे होली
अवगुठन की आट कर अब, कहाँ चारु चितवन वह भोली

कहा शाति वह मन की जिसने अपवादो की आग बुझा दी
नारी का कर रूप "समर्पण", अभिमानो की नीव हिला दी
खाने मे ही सब कुछ पाकर पाने की सब साध मिटा दी
तृप्ति कणो के अकुर पर, नव आकाक्षा की पात सुलादी

युग बदला, अब जाग उठी है नारी, समझे जग की भाषा
आया है आलोक शक्ति ने स्वय शक्ति की, की मीमासा
छोड रही वह शाप पुराने, पुरुष दे गया जो दुर्वासा
रूढि प्रश्नो का उसको अब भाए न लेश मात्र यह ढाचा ।

सनन सनन न

सनन सनन न चली पुरवाई
कै उडि कै हमार कपालन पै आई

क्या सखी !

द्वै पखडी गुलाब की ।
सिहर सिहर हौ बहुत रिसियाई
पै हाथन सो अपने हटा हू न पाई

क्या सखी !

वै पखडी गुलाब की ।
भीनी सुगंधि न नैन नमाए
कै सासन सो मोर हिया मा समाई

क्या वही ?

हा, वै पखडी गुलाब की ।
पात सो गात थरर थ[illegible]
को जानै रही थी न बिन [illegible]

क्या सखी तीर ?

ना, द्वै पखडी गु[illegible] ।

मौन निमत्रण

आज निशा का मौन निमत्रण,
आज निशा का रूप निराला,

चाद अधेरो मे ही खोया जैसे कुहरे मे मुह धोया
देख चादनी ने काले बादल का आचल सर पर डाला
आज निशा का रूप निराला

टपटप रस बरसाती रजनी आजा आलिंगन मे आजा,
आज निशा का रूप निराला

आज न रजनी रजनी सी रे चुप चुप सोजा और सुला जा
आज निशा का रूप निराला

रात न सोई मै क्यो सोऊ ?
तुम कहते हो रात हुई है मुझे दिख रहा भोर उजाला,
देखो दूर चमकते झुरमुट बाई ओर जली सी ज्वाला
आज निशा का रूप निराला

री वह तो कुछ प्रकृति नटी न, पीली रात आज की हाला
ये मदमाती रात प्रिये अब आजा आलिंगन मे आजा
आज निशा का रूप निराला

काले उजले बादल इसमे नही चादनी नही अधेरा
देते हो तुम धोखा प्रियतम रात नही बरखा की बेला
कैसे आऊ पास, सखे यह, रात ज्योति का अमर पुन्ज है
और अगर है रात तो पियतम, आज निशा का रूप निराला

अरी तीज की रात सखी यह नही पूर्णिमा या चौदस है
आज निशा का मौन निमत्रण

अब तो ऊषा निखरने वाली नही नही न न नही नही ना।
आज निशा का रूप निराला

पगली मद्धम याम बीतता नही नही की झडी लगी है
रिस रिस रस बरसाए रजनी लेकर अपनी बात अडी है
आज निशा का मौन निमत्रण

यह कैसी है रात कि जिसमे दूरी तक पत्ते हिलते है ?
आज निशा का रूप निराला

तेरे मन के उजियारे ही तुझे अधेरो मे छलते है
आज निशा का मौन निमत्रण

देखी रात अधेरी भी और चादी का सा रूप निहारा
पर न लाज के बाणो ने इस तरह कभी पहले सहारा
आज निशा का रूप निराला

बीत न पाया यह किशोर-पन, सारी रात जगा मेरा मन
आज निशा का मौन निमत्रण, कर न सका स्वीकार तेरा मन

आज निशा का मौन निमत्रण
आज निशा का रूप निराला



काली-मराली

जा री जा री काली
जा री जा मराली

तेरे सखि काले अग कसे पी को भाए है ?

इनसे सालिग्राम की होड करके लाए हैं ।
काहे तेरे साजना री तुझसे अनखनाए हैं ?

हमको खेल खेल मे रावनी बताए हैं ।
कैसे अपने अग को लुभावना बनाए तू ?
कैसे अपने रग को मनभावना बनाए तू ?

वह चतुर चितेरा मारे अग को सजाए है,
तजनी की सीम चिनकारिया बनाए है ।

मेरा रग दूध सा री मेरा अग फूल सा
हाथ धरे गात सखी मैला हुआ जाए है ।

तो भी तेरा रूप सखी पी को ना लुभाए है
मानिनी के मान सम अकेला हुआ जाए है।

तेरा रग भागवान मेरा रूप रावना
यू लगे है तू हमारे पाव का हो धोवना ।
ये गुमान रूप भरा तेरे हाथ आए री
ज्येष्ठ मास का पथिक निराश चला जाए री ।
अचना की ज्योत पर तू अपणो को आग दे
अग अग दाग कर माग मे सुहाग दे ।

जिसको पिया चाहे वो सुहागिनी है आली
चाह हो वो काली या कि हो मराली
▭

जीवन के सार

ओ मेरे जीवन के सार

लिपटा तू पावन बचपन से
बेलपत्र सा बढता आया
मेरे अगो मे सुकुमार

सकुची सिमटी तुझे देखकर
जब तूने आभास दिया था
डाला था यौवन पर भार

बूढी आशीषो मे तू था
मादक उछवासो मे तू था
प्रणय विरह का था आधार

बीज पल रहा था अकुर मे
फूल खिल रहा था मदिर मे
लेने को तेरा आकार

तू मेरा मधुमास बन गया
अन्तर्पट् का हास बन गया
मिला तृप्तियो को आधार

अन्नपूर्णा बन गई खिलाकर
सपूर्णा बन गई सुलाकर
विश्व बना मेरा आगार

जीवन का उपमान बना तू
ससृति का अभिमान बना तू
कोमल तत्वो का अभिसार

खोई तुझमे खेल-खेल मे
ऋतु वसत की रेल-पेल मे
पत्ते झडे रही बस डाल

बाट लगी अब उस दिन की रे
जब कधो पर पाव पसारे
जाऊगी करने विश्राम

जीवन पाएगा विस्तार



पाच वर्ष

पाच वर्ष के लिए गए हो
मेरे जीवन दीप बिछुड कर
कितने मोती ढुलकाएगे
ये नयनो के सीप बिखर कर

पाच वर्ष पया, लगता है
मा से अब तो रह गए बिछड कर

बालक ही जाते हो अब तुम
पूर्ण युवा बनकर आओगे
तब छोटी सी गोदी मे
तुतला कर बैठ नही पाओगे

माना यह अधिकार तुम्हारा
सदा-सदा के लिए अमर है
पर जीवन के कर्तव्यो की
धूप सभी से कही प्रखर है

कब से यह दिन देख रही थी
आख तुम्हे अक मे भर कर
शुभ दिन वही पुजाया विधि ने
क्यो आता है दिल भर-भर कर

सूनी गोद हृदय हलका सा
वक्र घुल रही है नस-नस मे
चैन और बैचेनी का
समिश्रण रहा न मेरे बस मे

कभी दौड कर जाती छत पर
कभी अटारी पर जाती हू
कभी महल मे आगन मे
छज्जो मे टकराकर आती हू

लाल मिलेगा साथी तुमको
किसी माई का प्यारा ललना
साथ साथ हसकर खुश रहकर
दोनो को ही होगा चलना

यू तो सारा ज्ञान पीठ
तुमको अपने घर जैसा होगा
पर सीमित सीमित रहने मे
कैसा अनुबधन सा होगा

सीख जाओगे तुम, मुह से कुछ
बात सभल कर ही करते है
सीख जाओगे तुम, अपनो से
दूर भला कसे रहते है

जान जाओगे तुम, रोटी का
मूल्य जगत मे क्या होता है
जान जाओगे तुम, ममता का
स्त्रोत सदा ही क्यो रोता है

कसरत करवाएगे तुमसे
और समय पर खाना पानी
विद्याभ्यास नियम से होगा
कोई न होगी आना कानी

चाह रही थी म भी तू, कल
पुर्जो सा होकर रह जाता
पर उन स्वेद कणो का झरना
मेरा सब साहस धो जाता

इसमे दोप न विधि का होगा
इसमे दोप न मेरा होगा
यह सब काम चलेगे ऐसे
जसे साझ सवेरा होगा

पुरुप कहा कब प्रेम पाश मे
बधकर बैठ कही पाता है
और पुरुप होने के नाते
सामर्थ्या को वरना होगा

जान रही हू वापस आओगे
ऐसे गुणवान कहा कर
आगे-पीछे डोल उठेगी
ऋधिसिद्धि आकर वनाकर

नित्य नए सपने लाकर
पहनाओगे साकार वनाकर
किन्तु विरह का मूल्य कहा
चुक पाएगा अको मे आकर

काले घन बरसाते पानी
आख हुई बरसकर काली
ना जाने क्या तुम्हे मिला हो
सरका देती हू मै थाली

माना मैने ग्रास स्वण के
मोती तुम्हे नही चुगवाए
पर ममता के चार कौर से
कमे अग निखर कर आए

जब कपडा ढकने उठती हूँ
रो पडती हू रोज रात को
हाय तुम्हे कब होश रहा है
ढकने का अपने सुगात को

ममता बेटी है परों की
इसने हटकर जात बागी
पर ममत्व की आह् गर्विणी
धीरे धीरे गुम इसकी

नव निर्माण यहाँ इस युग में
स्व निर्माण बड़ा मुश्किल है
ममता दया स्नेह से लक्ष्मी
का पलड़ा ज्यादा बोझिल है

अधिष्ठात्री का सौंप तुझे
अब उसके ही पैरों पड़ती हूँ
रोती नहीं तेरे जाने पर
युग बंधन पर रो पड़ती हूँ

मेरा राम गया है मुझसे
दूर, मेरा नन्हा सा छौना
जब-जब खुश होती हूँ उस पर
तब-तब आ जाता है रोना

बेबस दीन हीन आशा में
आज दुखदायी रुलाई
कौशल्या तेरे असह्य की
एक टीस मैंने भी पाई

मैं किसान की बेटी होती
तू किसान का बेटा होता
खाने भर को ही खेतों में
गेहूँ, चावल, सरसों बोता

तन ढकने को रुई जुलाहों
से अनाज देकर कतवाती
मोटा खाकर और पहनकर
रोज रात को गाने गाता

जीवन कितना सा है जग मे
जिसके लिए तपस्या इतनी
हाय इसी रोटी कपडे की
जग मे वडी समस्या कितनी

खाए सब अनाज के दाने
कोई न मोती चुग पाता है
रोटी का आश्रय ले
आकाक्षाओ ने जोडा नाता ह



पर मै वहा नही भेजूगी

बेटा भेज तुझे दूगी मैं, जहा न कोई तेरा होगा
भूख प्यास को जाने विन ही तेरा सांझ-सवेरा होगा
जहा न कोई कभी कहेगा, बेटा उठकर रोटी खाले
बहुत पढ चुका, घडी दो घडी, खेल-कूद कर दिल बहला ले

जहा न कोई आखें तेरे परिश्रम पर थक थक जाए गी
जहा न आचल पाकर तेरी अल्हडता फिर-फिर आएगी
मन पसद "वासुधी", तेरी, कभी न तुझको मिल पाएगी
जीवन की आगामी ऋतु पर, चचलता बलि हो जाएगी

ऐसी कठिन कन्दरा मे भी, भेज न तुझको सकुचाऊ गी
कर्त्तव्या की वेदी पर भावो का होम जगा लाऊगी

पर मैं वहा नही भेजूगी

जहा कोई माता निज सुत को, तुझसे ज्यादा प्यार करेगी
आख बचाई देकर तुझको, सदा उसी का लाड करेगी
तेरे साथ घूम आने पर, उसपर मीठे वार करेगी
मत निसार मुण्डा हो' कहकर, नीतिधुरी पर धार धरेगी

और कहेगी जब वह तुझसे, जरा बाल इसके सहला दे
धीरे-धीरे तेल लगा कर, हल्के हाथो से बहला दे ?
तब-तब तेरे रुखे बालो की तसवीर उभर आएगी
तब-तब तेरे सूखे गालो का ममता नहला आएगी

दाए अग फरक कर मेरे तुझ तक पहुचा ही तो देंगे
जब-जब मेरी कोख दु खेगी, तारे खुल खुल मुसका देंगे

तू न समझ पाएगा यह सब पर मैं वही पहुच जाऊगी
और उनींदी पलको पर फिर भार बनी सी झुक जाऊ गी

पर मै वहा नही भेजूगी



तेरा इन्टरव्यू

तेरा इन्टरव्यू होता है, मम ममत्व मय मन राता है

देवी मा ! देना वह इसको जिसमे दिखे भलाई इसकी
बालक ही है जिद करता है पर तू तो मा है मा ! मा है

मै मा कैसी मेरे ढिग तो सभी अधेरो मे खोया है
तब-तब दिया इसे वह सर ही जब-जब जो कह कर रोया है

मुझमे कब सामर्थ्य कि जानू भला कहा है बुरा कहा है
हा जब कटता अग-अग से तब यह अन्तमन रोता है

मैं तो जोड चीथडे दु ख के और लगा विरहा की पैदी
सीती ही जाऊगी निज मे गुदडी जीवन की बेपेदी

छोटा ही जीवन है जिसमे दुख-सुख भरने हम आते है
पर सब दूर हुए हो जिसके उसे कौन सुख ललचाते है

कब तक रहू पकड कर वे दिन जिनमे साथ रहा करता था
भले बुरे थे जैसे भी थे फिर भी साथ हुआ करता था

आह् न जाने विधि ने मुझसे कैसा यह खिलवाड किया है
जान न पाऊ वर है या लम्बे जीवन का शाप दिया है

सोने की कडियो ने मेरे आसू की लडिया गूथी है
जितनी बढती और उलझती लगता है दोना यूथी है

क्या पाएगे यह सब जाकर यह तो विघना हाथ तुम्हारे
पर यह सच है मैंने जा पाया था वह सब गवा दिया है

काग उडाती-सी बैठी हूँ पत्थर सी आखो को लेकर
तन स्वदेश मे मन विदेश मे कितना लम्बा है यह जीवन

क्या यह केवल मा की लोरी जो रह-रह कर मुझे रुलाती
दूरी क्या न हमारे सबके सार भरे सदभ मिटाती

क्या न इन्हे भी याद आएगी कभी किसी क्षण अनजाने ही
दे दे एक सहारा कहकर "नही" व्यथ ही अनजान ही

कितना वडा सहारा होगा, नही जानते एक 'नहीं' का
पर होगा विश्वास 'नही' जब इनका दिल छूकर आएगी

तब समझूगी ये समथ है, सर्व सुखी है, सर्वोपरि ह
तब क्यो मेरी आख भरेगी तब क्यो ममता हावी होगी



अपमान

बेटा क्या अपमान कराकर बेटा कहना छोड सकूगी
पुत्र रत्न! क्या मैं ममत्व के बधन से मुख मोड सकूगी
क्या यह दीन अवस्था मुझको इतना हीन बना पाएगी
तेरे लाख बहानो पर भी, कर्तव्या का छोड सकूगी

तेरे व्यग वाक्य वच तेरे, निजनता उनकी जननी है
रहते यहा हृदय मे छिपकर, तेरे हित यह मन छलनी हू
कितने ही आरोप लगाकर, लक्ष्मी गमन किया करती है
फिर तुझमे अपमान कराकर, अपना लक्ष्य भरा करती है

आज समय है, सब कहते है, सब के वाक्य हृदय न रोले
बहती गगा मे अवसर मे, बढकर हाथ समय पर धोले
क्या जाने यह भाग्य सभलकर कभी अभागो का ही होले
और कसक रह जाए अधूरी क्या न समय पर बधन खोले

पर बधन है यहा यहा पर

मैने तुझको धप दिखाते ही बधन से मुक्त किया था
काटी नाल उसी क्षण जिससे मैंने तुझको रक्त दिया था
दूध पिलाया था धडकन को, तू तो अपने आप जिया था
मर्यादा की लोको पर मा कहने का अधिकार दिया था

क्या दोहराऊ वही कहानी क्यो कर हाथ पकड चल पाया
मैं वह सब कह जाऊ कि जिसको जाना सदा सदा से माया
सच कहती हू, बाल सुलभ झाकी पर भी रोमाञ्च न आया
नियति नटी के कार्य कलापो की ही देखो तुझमे छाया

फिर कैसा अधिकार कि जिसको छूकर अपना तुम्ह कहूगी
ससृति को ही सौप तुम्हे म केवल जननी मात्र रहूगी
कितने ही तुम खोल चढालो इन अपमानो के बोलो पर
दृष्टि जहा धूमिल होगी, मैं तब तक इनका ताप सहूगी

कहता जाता भाग्य कहानी सुक मैना सा सुख की दुख की
जीवन मरण मोह ममता की, निष्ठुरता के अगणित मुख की
निधनता की खूब कहानी, कहता है यह बनकर योगी
पर तुझसे अपमान बिना यह नही कहानी पूरी होगी



सब से सुन्दर

मा सबसे सु दर बेटी वह
जिस पर तुझको नाज कभी था
तेरे बूढेपन से पहले
रेखाओ मे घिर आई है

कहती क्या 'तकदीर कहानी'
जन्म-ज म को बात पुरानी
तुझसे तो सम्बन्ध नया यह
रखने वाली बस साई है

लगता है विचित्र सा तुझ को
कभी न रोते देखा जिसको
उसके हित अन्तर कहता है
यह बेटी कब सुख पाई है

कभी-कभी क्यो रात जगाकर
ढूढा करती तू कुछ भू पर
इस उथली दुनिया मे कोई
क्या ऐसी भी गहराई है

रहने दे कुछ कही छिपा ही
एक कथा, अनकही कथा ही
तू अनजान बनी रह उससे
जो तेरे ढिग दु खदायी है



कुछ दिन

विटिया री कुछ दिन दु ख पाले
तेरा वापू कर्जदार है
तू भी इसका मूल्य चुका ले
वेटी री कुछ दिन दु ख पाले

सदा न सम दिन रह पाते हैं
सदा न जीवन दु ख पाते हैं
एक-एक पल वीत जिंदगी
को अपने साचे मे ढाले

जितने दिन की वात लाडली
उतने दिन तू भी दु ख पाले

दूध दही मे सीच वढाई
थी कोपल अपने आगन की
याद न कर वह प्यार पराया
था वह वात रही वचपन की

नीच घरान की कहलान
पर भी रखना हृदय सभाले

भूखे नगे कह देने से
सम्वन्धो के खुले न ताले

झुककर डाल ! फलो से लदकर
ऊच नीच का भेद मिटा ले

तौल यहा पर नर की, नर
नारायण सिक्को पर तुलता है
हलका पलडा देख पिता का
सुकुमारी तू क्यू घुलती है

होते आए सदा से नरसिंह—
नयना हृदय विदारक बात
दो भाटो की जगह पुष्प वरस
माहन से मान मनाले

गिरिजा गौरी तपसिन बेटी
जनम-जनम की रीत निभाले
नित उठ भाग्य मना ले बेटी
उसके घर मे कही न लाले

जब तक मेरे भाग्य शिथिल है
तब तक गौरा तू दु ख पाले

गुडिया घर

बना रहे तेरा गुडिया घर

छोटे मोटे मोटे, इसते खेल खिलौने खेल
मुडन टुडन काज पिरोजन, हल्दी कुम-कुम रले-मेले

इतना शोर शराबा फैले, लगे न तुम को यह अपना घर
बना रहे तेरा गुडिया घर

फिर युग बदले पीढी बदले, गुडिया से बुढिया बन जाए
नाती पाते हाथ पकड कर, तुझे उठाये तुझ बिठाए

बुढ्ढा तुझसे चिढ कर बाले, बात-बात मे तू दरसाए
रह न सके फिर भी उसके बिन, इतना सब पुछ भी होगे मर

बना रहे तेरा गुडिया घर

▭

दौहित्र

री यह छौना

बात बात मे रोना-धोना
कितने दिन के बाद मिला है
मुझको री यह लाल खिलौना
री यह छौना

इसकी मैया ऐसी कब थी
रात रात भर सोती कब थी
मेरी उन जवान रातो की
किसी जनम की दुश्मन भर थी

ये तो नीद बटाता मेरी
हँस हँस रात कटाता मेरी
बाल पकड कर खिल उठता है
जब जब आती मुझे घुमेरी

सुबह कबूतर चुगवाता है
ज्वार बाजरा खिलवाता है
पट पट मार हथेली भू पर
दूध मुहा सा मुँह बाता है

जब जब बिल्ली दिख जाती है
चिडियो की कतार आती है
या कि कबूतर उडते फर फर
किलक किलक कर चिल्लाता है

इतने खेल खिलाता है जब
कभी चार दिन को आता है
पूरा एक माह ही मेरा
बस यादो मे कट जाता है

कहती हू पट्टुए ! तू आकर
कुछ दिन तो रह कर जाया कर
तब पापा के सिर पर चढकर
कैसा नखरा दिखलाता है

बना रहे तू दीपक अपने
घर का दादी का बाबा का
ये तो बाल सुलभ लीला पर
मेरा हस मचल जाता है

□

पक्की बात

बाबा मैं चिट्ठी लिखता हू देखो पढकर जल्दी आना
तुमने पक्का बात करी थी देखो अब तुम भूल न जाना

डालर पर तस्वीर तुम्हारी छाप इन्होने दी है बाबा
मैं तो झट पहचान गया था ये तो हैं बस मेरे बाबा

पेनटिंग की इस लाल पेनसिल से बाबा ये नाम तुम्हारा
कितना बडा लिखा है देखो बाबा बाबा बाबा बाबा

नीली पीली हरी गुलाबी से कितनी बात लिख दी है
सब पढना जल्दी जल्दी से सभी खिलौने लेते आना

अम्मा कहती है तुमको यह देश नही अच्छा लगता ?
इसीलिए तुम आए नही हो यह मुझको गन्दा लगता है

देखो ना देखो ना बाबा यह बत्ती कितनी सुदर है
ये देखो दीवाल यहा की कितनी पीली है सुदर है

जब तुम आओगे ना बाबा तुम्ह सिखा दूगा मैं मेरे
कमरे की छोटी नीली बत्ती कैसे जलती बुझती है

और और मैं सभी सिखा दूगा पापा का पर सोते हैं
हम अपने कमरे म बाबा "ब्रेव" हो गए नहीं रोते है

अब तो बाबा घास यहा पर भी बिल्कुल कलकत्ते जैसी
हो गई बाबा गेद नही खेला मुझसे फिर भी कोई भी

पापा कहते हैं अब तुम बीमार नहीं हो अच्छे हो गए
हत्तेरे की आते क्यो नहीं देखो ना कितने दिन हो गए

सब के बाबा आते हैं हम उन सबको बाबा कहते है
पर बाबा वो सभी हमारे घर मे कभी नहीं रहते हैं



हम अतीत के भागी

क्या आखो देखा सब कुछ है ?

देख रही हू मन की आखो से बालक ! तुम महापुरूष हो।
ऋद्धि सिद्धि हे साथ, सुखी हो, सबसे बडी बात है खुश हो॥

अभी वहुत छोटे हो केवल सात कदम ही चल पाए हो।
पर इस सप्तपदी मे सस्कारो की गरिमा भर लाए हो॥

नानी हू, नानी का काम नही जीवन के साथ विचरना।
मेरा सुख सपूण हुआ जब हिला रही थी तेरा पलना॥

मेरे मन से निकली किरणे पलन की डोरी पर चढकर।
वरषा करती थी सब भाव सहेज, समेट, सवार, निखर कर॥

तेरे जीवन के सारे ही सुख सचय कर उसी समय ही।
वार रही थी नाना की दो आखे सब कुछ उसी समय ही॥

हम अतीत के भागी तुमको, कुछ उपहार न दे पाएगे।
पर मनबल सुख शाति प्रदा सस्कार तुम्हे दे ही जाएगे॥

और उसी के बल पर लगता है बालक ! तुम महापुरुष हो।
देख रही है मन की आखे, खूब सुखी हो, बेटे ! खुश हो॥

क्या आखो देखा सब कुछ है ?



अरी व्यथा

अरी व्यथा तू कब कम होगी

जीवन बीत गया आशाओ की गतिविधिया ही सवारते
वर्षो बीत गए प्रियतम का मुख मुर्झाया ही निहारते
हाय बुढापा आया अब तो रातो दुविधा मे विचारते
मेरी मर्म कहानी मे क्या कोई रेख न सुख की होगी
अरी व्यथा तू कब कम होगी

ये सासो के तार न टूटे इतने खिच खिच कर आने पर
मुझसे कब अभाव ही रूठे लाख तरह से बहलाने पर
क्या दिन, क्या है रात न जाने तेरे प्यारो की तृष्णा मे
आशा की झूठी डोरी मे जीवन की हर सास गु थेगी
अरी व्यथा तू कब कम होगी

कितने पन्ने रगे वही के हल्दी रोली शुभ स्वस्तिक से
पर वर्षो पर वष बिताए विश्वासो के कोरेपन से
कितनी शाल उढाई मैंने अपने सपनो की ठिठुरन को
पर सब अगले साल न जाने वह शुभ साई कहा पर होगी
अरी व्यथा तू कब कम होगी

यह अभाव यह भूख प्यास ही तो तन-मन का चिर-स्पदन है
रह लेती मैं भी पर मुझ पर रीति-प्रथा का अनुबधन है
कैसे रीत निभेगी वह सब जो मेरी सीमा के बाहर
मुझ जैसे जीवन जीने को ही कुछ रीत अनोखी होगी
अरी व्यथा तू कब कम होगी



तेरे ही दुख

तेरे ही दुख से घबराकर
तुझसे ही झुझलाती हू
अनहोनी जब आड़े आती
तुझसे ही अड जाती हू

देख नही पाती निरीहता
एक सिंह की बुझी-बुझी
चिड़िया बनकर चोच चुभाकर
तेरा रुद्र जगाती हू

शात पथिक हो बैठा पथ पर
बीती राहे नाप रहा
आधी का अन्धड बनकर
आगे की राह सुझाती हू

इन उद्वेगो मनवेगो का
भान कभी होगा तुझको
क्योकर इन अशक्त ऋतुओ मे
शक्ति रूप बन जाती हू

जगती ने तिल-तिल कर नोचा
तेरे पुष्ट सहारो को
चीख उठे तू दर्द मानकर
इसीलिए छू जाती हू

सह सकती हू ताप अनेको
तेरे साथ कदम रख कर
पर असह्य कह कर अन्यायो
को ही याद दिलाती हू

जो सामर्थ्य झुको, तो धरती
काप उठेगी निश्चय ही
सच्चाई चुप रही, तो व्याधा
झाक उठेगी निश्चय ही

आहे जो न ववण्डर वनकर
धाई कलुप मिटाने को
तो सव रचना घुट जाएगी
सूखी प्रलय कहाने को

नही देख पाती

नही देख पाती द्रुतगति को
मन्थर होने असमय ही
असफलता ताण्डव से कुचले
जाते श्रम के किसलय ही

नही देख पाती पक्ले
बाला से फिर फिर ललचाई
रह रह रुक रुक विदा ले रही
तरुणाई की अगडाई

नही सोच पाती तुम भूले
सुखद प्रणय के वे क्षण भी
जिनके हित लगता था पाया
हम दोनो ने जीवन ही

मन कहता था मन से तन से
युवा आमरण हम होगे
क्या होगा जो कधे झुककर
भार जरा सा ढो लेगे

पर यह भार हुआ कब हलका
जो कि पनपने देता भी
और न बदला समय कि जिसमे
मन हलका हो लेता भी

नही देख पाती हू फिर भी
देख रही हूँ यह सब ही
समय समय को फेरी मे ही
धुल जाते है जीवन ही

नही सोच पाती हू फिर भी
सोच रही हूँ यह सब ही
रह रह रूक रूक विदा ले रही
आशा की तरूणाई भी

फिर भी मन कहता है मन से
युवा आमरण हम होगे
सुखद् प्रणय के स्वप्न सजोए
भार सभी ये ढो लेगे

क्या करती आशा प्रसग का
साथ छोड यदि देती भी
देख नही पाती हूँ जो कुछ
देख रही हूँ वह सब ही

▭

श्रांत क्लांत पति से

मौन उठाए फिरते हो क्यो इतने बोझो का ससार
जिनके हित मे कभी भूलकर, भी मानेगे वे आभार

तन छलनी कर जीवन कब तक साथ भला दे पाएगा
क्या न यही उद्देश्य तुम्हारा असफल बन रह जाएगा।

व्यथ न मन का बोझ बढाकर अपना आपा विसराओ
पल दो पल सुख की छाया मे थके पख भी फैलाओ।

जीवन पर अधिकार सभी का है, पर कही तुम्हारा भी
मान स्वय को भाग्य विधाता भाग्य रेख मत ठुकराओ।

जो दे, सर माथेले पूजन अर्चन कर्म बनाकर ही
खोकर नही, तपस्वी होकर, सहज शांति का सुख पाओ।

दे सकती हू तुम्हे सहारा, नही तुम्हारे बोझो को
मेरे सूनेपन मे एही ! आ सूने होकर आओ।



रोग की आशका ・

इतना शून्य कही होता है यह तो जान न पाई थी
रक्तमयी हर शिरा ठहर कर बस आखो मे आई थी
उपचारक ने कहा कि 'पति को' व्याधि हृदय गति सम्भव है
रुका हृदय का स्पदन मेरा, प्रस्तुत मे मुसकाई थी

काप गया जीवन तरु का था एक एक पत्ता हिलकर
कुम्हलाया हर सुमन झुका सा नाट्य कर रहा था खिलकर
मिथ्या भाव प्रदशन था या वही भाव भर आया था
जहा वेदना-रूप क्षितिज बन जाया करते है मिलकर

पट के पीछे हृदय विदारक चीत्कारो का मेला था
अगणित सुखद स्वप्न थे जिनको एक ठेस न ठेला था
कपमयी पृथ्वी थी जिस पर महा प्रलय का रेला था
रग मच था शून्य स्वास ने खेल जहा पर खेला था

समाधिस्थ था राग, विरागी तन ले, धू धू ज्वाला मे
अवगुठन पर अवगुठन डाले अभिलाषा बाला ने
मौन मुखर हो नाच उठी कम्पित् मुस्कान बनावट मे
अगणित गाथाए उभरी अपलक पुतली की स्थिरता मे

सब ही अस्फुट सा अस्पष्ट सा निराधार सा अम्बर सा
युवा-मृतक-तृष्णा, सुहाग पर सद्यदात श्वेताम्बर सा
मौन वेदना सुरा-सरी कुछ भी पहचान न पाई थी
तलवो से बस तली सरकती स्पष्ट दृष्टिगत आई थी

जो भव का आधार कही है
निराकार साकार कही है
तो चरणो पर शून्य समर्पण
कर, झोली फैलाई थी

□

इतनी झुकी-झुकी हू

इतनी झुकी झुकी हूँ तुझ पर
यही सोचती हूँ रुक रुक कर
कितनी झुकी झुकी हूँ तुझ पर

जरा हरारत हो जाने पर
मेरी देह सुलग उठती है
जरा कपकपी आए तुझ पर
रोमावली सिहर उठती है

तुझे जरा सा भी कुछ हो
सतुलन हृदय का खो जाता है
ना जाने मस्तिष्क कहा की
बातें उठा उठा लाता है

सभी कहा करते है पागल
मुझे, मेरी नादानी कह कर
क्या जाने वे देह तुम्हारी
लिए, देह मेरी गलती है

इसी देह को लेकर ही तो स्वप्नो का साम्राज्य सजाया
इसी देह के साथ जुडी है मेरे अस्तित्वों की माया

इसी सहारे पर मैंने सुख की सीमाओं को छू पाया
इसी ब्रम्ह मे खोकर सभी भुलादी ब्रह्मज्ञान की माया

यही देह तो मेरी जीवन नैया की पतवार रही है
सबल डाड हो जिस नैया के उसे कही मझदार नही है

चिंता–साथी

मैं केवल चिंता की साथी

मोह कहा पल पाया मेरा छोह कहा घुल पाया मेरा
कहा प्रणय दे पाया मुझको मेरे विश्वासी की थाती

बंधन जितने सभी हठीले बिना रंग हो सभी रंगीले
अंतर का सूनापन लेकर भी चलती सासों का पाती

चाह आह का ही अवलंबन टीस कराहों का ही मंथन
उर में ज्वाल प्रगट में ऊर्मि स्नेह भिगोई जलती बाती

झिलमिल पथ के रत्न सभी ये, हसते खिंचते रत्न सभी ये,
मैं घुमाव को पथ प्रतिमा बस दूरो के सकेत बतानी,
मैं केवल चिंता की साथी

राहें थाह छोड बढे जब अधियारो की मेड ढहे जब
मंदिर की पुरवाई मिले तब कौन कहेगा जीवन साथी

बढो बढो पथ के प्रवीण तुम, आलोको के शिखर सीम तुम
आल्हादो के नयन मीन तुम, "भव्य तुम्हारा" मेरा साथी
मैं केवल चिंता की साथी



अब क्या करना है

अब क्या करना है शृंगार

प्रियतम को यह रूप न भाया,
भवरा कली-कली मडराया
गई सुरभि भी हिम्मत हार,
अब क्या करना है शृंगार

कभी कुसुम यह था मुस्काया,
मधुकर ने जब राग सुनाया
चाही दो पल की मनुहार,
अब क्या करना है शृंगार

अब तो बस बाकी मुरझाना,
धूल धूसरित हो कर पाना
आते जाते चरण दुलार,
अब क्या करना है शृंगार



कुण्ठित होना नही चाहती

कुण्ठित होना नही चाहती

दु ख देने वाले सन्दर्भो को, पुनरावृति हो करकर मैं
उनमे खोना नही चाहती, कुण्ठित होना नही चाहती

पा न सका सुख सोचे जो नर क्या पाएगा धीरज खोकर
व्यथ प्रसाधन मय उपचारो की जड धोना नही चाहती।
कुण्ठित होना नही चाहती

बीता तीन चतुर्थी जीवन, लग न सका अब तक जग मे मन
काली कमली धाई निचोडी, इसे भिगोना नही चाहती
कुण्ठित होना नही चाहती

दु ख आए या सुख की बेला, बीते मेले का सा रेला
जीवन जाए सदा ही ठला, मुड मुड रोना नही चाहती
कुण्ठित होना नही चाहती

क्या है मन का उलझाने मे, शाति रहो अब सुलझाने मैं
निराकार, उपल० याकषण, जादू, टाना नही चाहती
कुण्ठित हाना नही चाहती

सम सत भाव सखा सब साखी, यह मेरा सबल बैसाखी
डगर डगर चढ चलू इसे ले, जिसको खोना नही चाहती
कुण्ठित होना नही चाहती



मुन्दी-कली

मुदी कली मुसकाना सीख

रो रो जग को तडपाने से, वाल वाल वच जाना मीख

मुदी कली मुसकाना सीख

राहो भवरे की गजार पर वहक वहक इतराना सीख
आती जाती हर बयार पर झूम झूम झुक जाना सीख

अपना सुख बटोर ले खुद ही, मागे मिली किसी को भीख
अपने आसू पोछ पटल से, बगिया को वहलाना सीख

हेर न औरों के सुहाग का मिला न तुझको मन का मीत
भाग्य न सबका सम हे पगली ! खोने मे पा जाना सीख

क्या होगा अस्तित्व मिटा कर ये तो नही जगत की रीत
दोनो हाथ पराग लुटाकर, खो ले जनम जनम की भीत

यह वेला वसत है कलिके ! नही गया है जीवन बीत
यू असमय मुरझा कर भी तो, रखनी है सासो से प्रीत

हाहाकार न तेरे साथी काटो से मधु पाना सीख
तीक्ष्ण वेदना मे पराग-परिमल-पुष्पित वन जाना सीख
मुदी कली मुसकाना सीख



कर लेने दो प्यार

कर लेने दो प्यार अरे क्यों जलते हो

कितना सीमित है यह जीवन
कितने सीमित हैं मानव के
अन्तर की अभिलाषा के क्षण
क्यू झूठे अधिकार हृदय पर दलते हो
कर लेने दो

बार बार आने को क्या है
चलता फिरता जीवन जाता
प्यार नाम का एक धुआ सा
क्यू उसका दम घोट वहम मे पलते हो
कर लेने दो

कितनी देर खिलेगा उपवन
कितनी देर सुगध उडेगी
कितनी देर छलेगा गुजन
क्यू चपला की चचलता को छलते हो
कर लेने दो

झूठा जग झूठी माया ठग
जीवित रहने का आश्रय भर
जान रहे हो तुम तो यह सब
क्यू कटक से राह साकरी करते हो
कर लेने दो

▭

तुमने मेरा प्यार चुराया

तुमने मेरा प्यार चुराया
तुम तो समझ न पाए प्रियतम !
मेरा नन्हा दिल भर आया

तुमने मेरा प्यार चुराया

मैंने एक उपेक्षित कंकर
राहों में झुक बीन उठाया
अपने आंचल से दुलराया
तुमने उसको वज्र बताया

तुमने मेरा प्यार चुराया

मैं उसको अपना कह बैठी
हृदय लगाकर मन दे बैठी
और बलाएं भी ले बैठी
तुमने सब दूषित ठहराया

तुमने मेरा प्यार चुराया

रिक्त अंक कोई बचपन का
रिसता घाव अधूरेपन का
मैंने धीरे से सहलाया
तुमने हा हा कार मचाया

तुमने मेरा प्यार चुराया

तुलना कब थी उसकी तुमसे
मेरे आश्रित की आश्रय से
तुलना के काटे पर चढकर
तुमने अपना मान घटाया

तुमने मेरा प्यार चुराया

मुझको लौकिक ही बतलाकर
तप्त स्वर्ण को दाग लगाकर
पावनता को आग लगाकर
तुमने ममता को झुठलाया

तुमने मेरा प्यार चुराया

तुमने मेरे भोलेपन को
खेलो मे खोलेने पन को
सशय की वेदी पर रखकर
कामुकता का भाव बताया

तुमने मेरा प्यार चुराया

भूल गई राधा के सपने
भूल गई माटो के मथने
हाय ! आज मैंने सब कुछ ही
तेरी लौ पर भेटचढाया

तुमने मेरा प्यार चुराया

रोया शैशव रोया जीवन
रोया एक पुजारिन का मन
जिसके पत्थर ने अर्पण के
फूलो को कटक बतलाया
तुमने मेरा प्यार चुराया



तुम कब-कब सह पाए

तुम कब-कब सह पाए कि हसकर बात किसी से करली हो
नौ नौ आसू से पलपल का मोल चुकाया है मैंने
भोली मुस्कानें भी मेरी सहज भाव से सह न सके
अब चुप हू तो बार-बार क्यो कहते हो मुस्काने को

मुस्कानो मे भूल जाऊँगी कब कसे मुस्काना है
किसके आगे खुश रहना है किससे बैर निभाना है
चुप रहने मे सिमट आए है सभी सहारे जीवन के
सरल चित्त प्रतिबन्ध लगाकर कभी कही चल पाया है ?

कभी किसी के लिए हृदय मे नही दुराशा जागी थी
फिर भी जाने क्यो रो रोकर ही जीवन बहलाया है
स्यात् न इच्छाओ का होना ही रोने का कारण था
एक शब्द पर लॉन्छन के, जैसे सवस्व गवाया है ।

है अतर अब कहा कि चुप हो रहू या कि मुसका ही लूँ
मेरे हेतु समय ने सब समता की भट चढाया है
यदि तेरी इच्छा कोरी मुस्कानो तक ही सीमित है
ले मुसका देती हू, कहदे एक बार बस "भाया है"

□

करूँ प्रार्थना

करूँ प्राथना ! किससे ? तुमसे ? क्या करना है !
मन के तारो से ही जब, सम्बन्ध तुम्हारा टूट गया है
बिना कहे अपराध किसीका, तेरा मानस रूठ गया है
फिर कैसी वह आश, कि लेकर नाम, बुला ही लूगी तुमको
दर्द भरे गीतो को गा, गाकर, बहका ही लूगी तुमको

दर्द चुभा करते हैं उसको, जिसका मन से तार जुडा हो
क्या जानेगा, क्या समझेगा, जो मुझसे ही आज मुडा हो
रोने से कब व्यथा जगेगी, हँसने से कब सुख उपजेगा
मेरे चारो ओर अचानक, पागलपन का भाव जगेगा

कई दद ऐसे हैं जिनका, केवल सुनने से नाता है
सुनने वाला नही किसी को, सुनकर कुछ भी दे पाता है
पर उसका आभार कि उसने बोझा हलका किया किसी का
लाखो का भी दान न कर पाता है, जो वह कर जाता है

क्षमता लाते सुनने की तो क्यो यह दर्द यहा पर होते
क्यो तुम निरासक्त बन रहते, क्यो हम इसी बात पर रोते
सुख-दुख आने-जाने हैं, केवल सुनने से मुह फेरा है
दोनो ओर खुली अब खाई, भाव न यह केवल तेरा है

जो कुछ सहना है सहना है कहना है या चुप रहना है
हुँकारो की आश न करके ही तुझसे यह सब कहना है
गाथा गाथा दोहराती है, कही वही टकरा जाती है
एक बूंद समता की पाकर, दोनो हल्की हो जाती है



तूने क्या पाया

मैं तो तुझमे भूल गई हूँ
तू किसमे भूला है बोल
मैंने तो तुझको पाया है
तूने क्या पाया है बोल

आज उलहना देते जग मे चलना मुझे नही आता
मेरी दुनिया मे बस तुम हो और न कुछ मुझको भाता
तुम कहते हो कर्तव्यो से तोड़ा है मैंने नाता
मैं कहती हूँ कर्म परीक्षा करना तुम्हे नही आता

तुम कहते हो राम कहानी बीते युग की बातो की
मैं सहती हूँ चोटें प्रतिपल वर्तमान आघातो की
वर्तमान के अर्चन मे रत मैं न भूत पर मडराती
ध्येय बनाकर लक्ष्य साधकर एक देवता को ध्याती

दूर गए हे जो मुझसे कर याद उन्हे रो लेती हूँ
जाने वालो के सुख दुख की जीर्ण याद धो लेती हूँ।
बीता युग तो भूत कहाता मैं न तन्त्र की पूजक हूँ
गीता का उपदेश नसो मे उसी मन्त्र की पूजक हूँ

मैं तो कुछ पाना चाहूँ कुछ खोना मुझे नही भाता
खोयेपन को भाव बनाकर रोना मुझे नही आता
जिसको समझे आज निठुरता यह तो लय है जीवन की
जिसको कहती आज साधना वह विरक्ति है इस मन की

भाव जुडाकर सवल पाकर उसमे ही खो लेती हूँ
जो कुछ पा लेती हूँ मैं तो उसमे खुश हो लेती हूँ
जनमन मे जो ज्वाल जल रही वह मुझमे भी सीमित है
विखराती हूँ उसे नही माला मनके पो लेती हू

तुम जिसको विलास कह देते वह तो मेरी पूजा है
दाता का ही भाव निहित है भाव न कोई दूजा है
आज हटाकर देखो सुख से, ऐश्वर्यों की टोली से
गीता का ही भाव जगेगा तृष्णाओ की होली से



हाथ पसारू

किसके आगे हाथ पसारूँ ?
जीवन भर के अभिमानो को
क्या इस जीवन मे ही हारूँ
किसके आगे हाथ पसारु
किसके

कह कर निज असहाय अवस्था
और तुम्हारी अथ व्यवस्था
दोषो के पलडे पर रखकर
तपमय पथ के मौन बुहारूँ
किसके

ज्ञात यही मेरे झुकने से
अम्बर भी झुक जाएगा
अ धकार बढता आएगा
पर क्या भू पर उसे उतारूँ
किसके

अब तक के अवलम्ब सुलाकर
कमभीरू दु खभीरू कहाकर
वैपरीत्य क्षण मात्र जगाकर
क्या सारे सह-सकट हारूँ
किसके

क्या मेरा विश्वास उठ गया
क्या कुछ ऐसा आज लुट गया
जिसकी चरम सीम छू लेने
किसी और को आज पुकारूँ
किसके

देगा, जो देना ही होगा
जो देगा, लेना ही होगा
क्यो भावुक से आधारो पर
मन से मन की बात पखारू
किसके

▭

जन्म-दिन

किसकी खुशियां मना रहे हो ?

लेकर उसका नाम छलकते जाम कि जिसका रीता प्याला
बूद-बूद अमृत को तरसा मिली न मदमस्ती की हाला
जिसके जीवन मे हर सास नई गाठे लग जाया करती
उस जीवन की एक गाठ पर इतनी लडिया लुटा रहे हो

किसकी खुशिया मना रहे हो ?

जीवन ने न सही तारीखो ने ही इतना मान दिलाया
तुमने मेरा जन्म-दिवस त्योहार बनाकर आज मनाया
तुमने मेरी पीडाओ पर लाल मखमली खोल चढाया
अपनी कहकर आज मनालो जिसकी खुशिया मना रहे हो

किसकी खुशियां मना रहे हो ?



माँग रहा है कौन

तुझसे माग रहा है कौन

अभी आस्था है अनुपम मे
अभी सत्यता है जीवन मे
अभी चेतना है तन मन मे
अभी वेदना है कम्पन मे

अभी सिसकियाँ है रोदन मे
अभी अचना है अपण मे
अभी सुआशा है आँगन मे
झोली फलाता है कौन

तुझसे माग रहा है कौन

अभी न इच्छाएँ इतनी वलवती
वनी, सिर झुका चले हम
अभी न आशाओ ने सिर धुन
लिया कि साथी रो बैठे हम

अभी न जीवन बीत गया है
किंचित मात्र अतीत गया है
अभी देखना है जीवन मे
कौन दिलाता पाता कौन

तुझसे माँग रहा है कौन



वहुत प्यार करती हू

वहुत प्यार करती हूँ तुझको जीवन साथी
वरना तेरी इन राहो पर साथ-साथ कैसे चल पाती

शायद प्यार न करती इतना
जो होता यह रूप न तेरा
शायद चाह न होती तुझको
हाथ पकडने की तव मेरा
वाँहों के गलहार वनाकर
रूठ रूठ कर मान मनाती
इन उदास आँखो को तव
सीने से कहा लगा मैं पाती
वहुत प्यार

जीवन से थक-थक जव आते
मैं हस हस कर हू वहलाती
भाव अधूरा रह जाता ये
जो इस छलना मे हूँ पाती
मैं उदास हूँ तू रगीन है
कहकर तुम मुसका देते हो
दद अधूरा रह जाता,
सपने मे भी जो मुसका पाती
वहुत प्यार

तलवो को तेरे ककर पत्थर
काटे घायल करते हैं,
दामन से सहला कर मन ही
मन कितने सावन झरते हैं

आँखों में भूखे सपनों की
आग और पानी पी जाती
तुम राही से रो उठते हो
मैं मजिल सी चुप हो जाती
वहुत प्यार

वनकर यो आधार शिला तेरी मैंने कुछ तो पाया है
कौन कहे आधारित हो मैं पाती या कि नही कुछ पाती
कौन कहे तव प्रणय वासना की क्रीडाओ मे ही खोकर
मेरे मन की मीरा की यह प्यास अधूरी ही रह जाती
वहुत प्यार



हो मुझ पर विश्वास

हो मुझ पर विश्वास तुम्हारा
या कि सभी से अधिक खीझ हो
कहा फर्क पडता है इससे
ध्येय एक है मंजिल एक

तुम पर भार सभी घर का है
रिश्तेदारी का, कुनबे का
लेने देने का, समाज का
छोटे से छोटे हिसाब का
फीसो का, खोई किताब का
राशन पानी का, उधार का
कपडे लत्ते का, सिंगार का

बेटी के उठते उभार का
ऋतु का, बलखाती बहार का
ऋतु परिवर्तन के बुखार का
औषधि का, पथ्योपचार का
आगन्तुक से सद्व्यवहार का
वेतन का, धन का, व्यापार का

पर मुझ पर है भार जरासा

तेरी बातो को खे जाना
सदा तेरे सम्मुख मुसकाना
भरसक सुर मे ताल मिलाकर
चरण चिन्ह पर चलते जाना

देह न देह न आपा अपना
इगित इगित पाव वढाना
तेरे किए कम को विधि का
लेख बना कर दिल वहलाना

अनुभूति का भाव दवाकर
चेतनता का श्राप सुलाकर
अह भाव मे मुक्त कहाकर
वस लीको पर चलते जाना

और जगा लाना वे सपने
जिनमे तेरा हप वसा है
जिन सपनो को पूरा करने
यह थोथा ससार रचा है।

कहा फर्क पडता है इससे
मुझ पर है विश्वास तुम्हारा
या कि सभी से अधिक खीझ है
ध्येय एक हैं मजिल एक



कहा जरूरत आन पडी है

कहा जरूरत आन पडी है
जो आनी थी वह न आई
आई कोई बेमेल घडी है,
कहा जरूरत आन पडी है

क्यो मेरे अपराध उभर कर
आज तुम्हारे सन्मुख आते
कौन सहारे पा लेने तुम
बार-बार उनको दोहराते

जिन्हे क्षमा का स्वर पहनाकर
कभी हृदय से दूर किया था
उनके ही अवशेष सवर कर
क्यो मन्दिर मे वापस आते

दुष्कार-जग-प्रवचना के प्रति
मान सहजता ही छलती है
भोले-भावुक आधारो पर
यह जग वीथि कहा चलती है

आज भला उन बातो को
लेकर क्या तुमसे रार करूगी
इतना ही है दोहराने पर
थोडे सुख दुख और भरूगी

आसमान से तभी धरा पर
क्या न उतर कर मैं आई थी
है सच, नभ गगासे मेरी,
धरती ने कीचड पाई थी

मैने ही पहचान न पाया
रूप धरा का रूप धरा है
पाव न जम पाते है जिसके
चारो खाने चित्त गिरा है

गिरकर ही था हाथ बढाया
जिसे तुम्ही ने सहलाया था
भूल गई थी बीती बाते
जब छाती मे सिमटाया था

तुमने ही तो साथ कदम
रखने का साहस दिलवाया था
प्रीत भरी बातो से दुनिया
को दरपन सा चमकाया था

देव बने थे तुम ही मेरे
मन मन्दिर मे घर पाया था
चुभते शूल हटे तो मनका
पुष्प चरण पर चढ आया था

जिन काटो को अपने हाथो
मेरे मन से बीन लिया था
जिस मन की सारी खरोच को
बाला पन का नाम दिया था

जिस मन की कोमलता छूकर
तेरा भी मन भर आया था
आज उसे ही अपराधी के
सिहासन पर क्यो बैठाते

कहा जरूरत आन पडी है



हाथो पर रख हाथ

हाथो पर रख हाथ सदेशे जो देते हो
उसका अथ सही शब्दो मे मुझे पता है
क्योंकि एक दिन यही सदेशे मुझे दिये थे

वही अर्थ, भूकम्प धरा पर ले आता है
स्वप्न जगत की गहरी नीव डिगा जाता है
कटु यथाथ के सारे बधन खुलवाता है
अनुरागो का रूप विरागी कर जाता है

जीवन झाम न लय बिन झकृत हो पाती है
सरस कहानी बीच-बीच मे रुक जाती है
घनाए चलचित्र दुबारा दोहराती है
एक आस्था ही न कही सबल पाती है

राही का रुख मोड बटोही ! चलना होगा
भावो का भव तोड वयस म ढलना होगा
कमरथी दु भेद्य सारथी के शब्दो पर
फल की आशा छोड स्वय को छलना होगा



कही जरा सी उलझन है

कही जरा सी उलझन है
आए पास हमारे प्रियतम
छूकर एक नवेली नार
तन मन सुलग उठा मेरा
उन स्पर्शो मे था अगार

प्रीत करे हमसे सराहना
औरो की होती दिन-रात
कैसे सुन्दर होठ रसीले
कैसे कोमल-कोमल गात

मैं हू एक न बन पाती हू
कई कई या दो ही चार
कैसे तृप्त करू हर आशा
वह न कही जिसका आधार

यह असमथ वेदना ही क्या
चली चलेगी मेरे साथ
क्या जीवन की भेट चढा कर
यही लगेगा मेरे हाथ

जीवन दिया किसी ने किसको
कब कि कहू यह मेरा भाग
पर प्रिय के साचे मे मन के
कठिन तत्वको ढाला गाल

पर सन्तोष न पाया उसने
चचल मन पर था कुछ भार
शायद रहा वासना का हो
कोई अजाना यह व्यवहार

दोषी कह न दूर कर पाती
लेती आलिगन मे वाध
सदा सदा से मान उसी को
निज विश्वासो का आधार

यह कैसा विश्वास कि उसका
सभी वना मेरा उपहार
आह ! अहम् को दाव लगाकर
जीत वताती अपनी हार

सपने जोड न जाने क्या क्या
करता है मुझसे खिलवाड
इस निरीहता पर कोमलता
लेती भव्य सुखो की आड

मेरे मन ने ध्येय वनाकर
पूजा है उसको साभार
इसी हेतु विक्षिप्त तृषा का
नही यहा पर हाहाकार

उसने चाहा अमर वासना
का छूना अन्तिम परिधान
चपल चचलता लूट ले गई
उसके सन्तोषो की आन

मैं सीमित वह रहे असीमित
चक्र चले यह जीवन का
भर न सके घट मेरा-तेरा
मनका, काय सधे तन का

जब तक समझ सकेगा वह-यह
नही भटकने मे सुख है
तब तक स्वत शान्त होगी यह
कही जरा सी उलझन है



अपने मन की कोई बात

पहली बार कहा है तुमने

तुमसे कुछ भी नही कहू मैं, अपने मन की कोई बात
ले हस कर कर लेती हू यह प्रण मैं तेरे सन्मुख आज,

कहना-सुनना कहा, प्रणय का यह प्रगाढ परिरभन था
सह न सके जिसकी खरोच, यह तो सुहाग का कगन था

कह सुन कर गाठें बधवाना, प्राणो का गठबधन था
व्यथा आसुओ मे ढुलकाना, अन्तर्मन का अर्पण था

दाँई-बाई आख न रोई, वह प्रयाग था सगम था
कभी न दूरी को सह पाना, इतना मात्र असँयम था

और निकट कुछ और निकट, आ पाने का अवगुँठन था
सहज मानिनी के स्वभाव का मान भरा अनुवर्तन था

किन्तु प्रणयिनी के चरित्र ये, सभी निरथक सब फीके
छूटा अवलम्बन तो पाये, अपने युगल हाथ रीते

शीश झुका जिस प्रस्तर पर, वह स्फटिक शिला आकर्षण था
मागे वर सौ बार उसी से, वही देव हृदयगम था

मुझसे छीन लिया क्यो तुमने कहने सुनने का अधिकार
बन्द कर दिया क्यो तुमने मेरी लहरो का पारावार,

मोती बनकर यहा बसेंगे अश्रु कणो के ऐसे खेत
जिनको मानस झेल न पाया लुब्ध हुई मुट्ठी भर रेत

जब तक समझ सकेगा वह-यह
नहीं भटकने में सुख है
तब तक स्वत शान्त होगी यह
कही जरा सी उलझन है



अपने मन की कोई बात

पहली बार कहा है तुमने

तुमसे कुछ भी नही कहू मैं, अपने मन की कोई बात
ले हस कर कर लेती हू यह प्रण मैं तेरे सन्मुख आज,

कहना-सुनना कहा, प्रणय का यह प्रगाढ परिरभन था
सह न सके जिसको खरोच, यह तो सुहाग का कगन था

कह सुन कर गाठें बधवाना, प्राणो का गठबधन था
व्यथा आसुओ मे ढुलकाना, अन्तर्मन का अर्पण था

दाँई-बाई आँख न रोई, वह प्रयाग था सगम था
कभी न दूरी को सह पाना, इतना मात्र असंयम था

और निकट कुछ और निकट, आ पाने का अवगुंठन था
सहज मानिनी के स्वभाव का मान भरा अनुवर्तन था

किन्तु प्रणयिनी के चरित्र थे, सभी निरथक सब फीके
छुटा अवलम्बन तो पाये, अपने युगल हाथ रीते

शीश झुका जिस प्रस्तर पर, वह स्फटिक शिला आकर्षण था
मागे वर सौ बार उसी से, वही देव हृदयगम था

मुझसे छीन लिया क्यो तुमने कहने सुनने का अधिकार
बन्द कर दिया क्यो तुमने मेरी लहरो का पारावार ,

मोती बनकर यहा बसेंगे अश्रु कणो के ऐसे खेत
जिनको मानस झेल न पाया लुब्ध हुई मुट्ठी भर रेत

तुम्हें न रुचिकर प्रेम-पिपासा, नहीं प्रणय का वह आचार
जहां विविध राहों से होकर, लक्ष्य सदा ही एकाकार

आंसू पोंछ न पाए मेरे, तप्त होंठ न चूम सके
नहीं वक्ष से मुझे सटाकर, धीरे-धीरे झूम सके

नहीं कलाई पकड़ी मेरी, नहीं विवादों में आए
नहीं स्वच्छ कर अन्तर अपना, मेरे साथ-साथ रोए

अलक संवार न पाए, भीगी पलकें नहिं पुचकार सके
नहीं पीठ थपकाकर, मेरे मुख पर अपना वार सके

नहीं सजा दी मुझको ऐसी, "नहीं रोऊं या गाऊं मैं"
बस इतना आदेश, तुम्हारे सन्मुख चुप हो जाऊं मैं

अब तक थी कब मुझे वेदना, यह दिन उसका पहला है
एक नया सपलोटा अन्तर में सर-सर कर सहला है

अब तक तो रोकर, गाकर, झुंझलाकर कितने बल खाकर
सदा रही थी पास तुम्हारे, दूर-दूर से अनखा कर

आज रोकना पड़ा हृदय को, तुमसे नहीं कहूंगी बात
जीवन में सब सहने होंगे, मुझे अकेले ही आघात

शक्ति स्वरूपा हूं, इस सबसे नहीं कमर झुक पाएगी
पर दूरी का बोझा ढोकर, प्रणय-बेलि झर जाएगी

पूरी होना चाह रही थी जो मुझमें, वह आदिम प्यास
सहज अधूरी रह जाएगी जैसे मुझमें जीवन आज

▭

तुम्हे प्यार करना आता है

तुम जग को दुलरा सकते हो
हँस हँस कँठ लगा सकते हो
स्नेह घोल जडकर चितवन मे
बाँकापन भी ला सकते हो,

क्योकि तुम्हे यह सब भाता है,
तुम्हे प्यार करना आता है।

तुम अपनी चाहत पर मुझको
सभी जगह ले जा सकते हो
खुल सकते हो गा सकते हो
भाई-बहन बना सकते हो

सत्य तुम्हारा ही नाता है,
तुम्हे प्यार करना आता है।

मैं हूं निपट अकेली फिर भी
नही किसी से कुछ कह पाती
छोड आई सब गीत स्नेह के
जहा न इस ऋतु मे रह पाती

स्वार्थ भरा मेरा नाता है,
तुम्हे प्यार करना आता है।

मेरा स्नेह काम का भागी
चितवन दूषित सदा अभागी
चाहे कोई छुए भाव वश
अग सदा मेरे अपराधी

मोती चमक लुटा जाता है,
तुम्हें प्यार करना आता है।

तोल तुम्हारी तुला तुम्हारी
न्याय तुम्हारा रीत तुम्हारी
न्यायाधीश तुम्ही हो प्रियतम्
मैं तो रहूँ सदा आभारी

लिया तुम्ही ने यह पाता है,
तुम्हें प्यार करना आता है।



मै अपना अस्तित्व मिटाऊँ ?

मैं अपना अस्तित्व मिटाऊँ ?
गौरव पा 'भव कल्याणी' का
क्या विनाश कर्त्री बन जाऊँ ?
मैं अपना अस्तित्व मिटाऊँ

जो सौभाग्य चुराया करती
तितली बन मडराया करती
उनके सन्मुख नत मस्तक हो
अनुगामिनी मात्र कहलाऊँ ?

यह अस्तित्व मिटा जा मेरा !

कहा शान्ति पाएगा वह नर
जिसको अनथक प्यार किया है
परिणय की परिभाषा को ही
जिसके ऊपर वार दिया है

क्षत-विक्षत तृष्णाओ मे, भर—
आशा का सचार दिया है
सारे सवेदन सहेज कर
सपनो मे भी प्यार दिया है

जिसे भुजाओ मे बन्दी कर
भुला सभी ससार दिया है
जिसकी एक खुली स्मिति पाने
अपना सरबस हार दिया है

निराकार सपनो को जिसके
रूप सदा साकार दिया है
जिसके साथ सात डग भर कर
खाल मोक्ष का द्वार दिया है

उसके जरा वहक जाने पर
थोडा पाव फिसल जाने पर
अपनी उलझन सुलझाते ही
क्या उसकी उलझन वन जाऊँ ?

या मैं भी वे साज सजा लू
जो साध्वी सपूर्ति सुला दें
या वैसे ही रूप सवारूँ
जो प्रिय की पशुता वहला दे

अग अग पर की या की सी,
स्वाग भरी थिरकन में भर लू।'
केवल कायिक आकर्पण की
प्रिय के तन मे आँच उठाऊँ ?

मैं अपना अस्तित्व मिटाऊँ ?

किंचित् सी वाधा को लेकर
शक्ति स्वरूपा मैं डर जाऊँ ?
जो अपना है उसे मनाने
अभिनय छवि के वाण चलाऊँ,

रुदन कर उठेगा सतीत्व
श्रद्धा मुह पर परला तानेगी
नव दुर्गा की उपमा से फिर
कहाँ प्रजा मुझको जानेगी !

हँस-हँस कर वहला-वहला कर
चाहे जो कुछ भी कर जाऊँ
अपमानो से 'वाद्य' कहा क्यो
सम्मानो का शीश झुकाऊँ

क्यो मैं अपना रूप गँवा कर
रग वहिरगे रूप सजाकर
मन के सहज भाव को खोकर
आडम्बर के व्यास वढाऊँ

लोलुप-दृष्टि न भर पाएगी
गृह-प्रतिमा-आलोक शिखा से
व्यर्थ धरा पर अपना ज्योतित
नभमण्डल उतार कर लाऊँ

उन्नत रह कर जो कुछ खोया
नत होकर क्या वह पा जाऊँ ?
क्यो अपनी छाया को छलकर
छलनाओ की भेंट चढाऊँ

क्या अपनी उलझन बन जाऊँ ?

बनी कही उलझन तो किससे
वह आतप की वात कहेगा
किसके वक्ष-नीड मे छिपकर
विवशताओ के शीश धुनेगा

किसकी वाह पकड कर ऊँची—
नीची राहे नाप वढेगा
किसके विश्वासो की शीतलता
मे, सुख के सास भरेगा

किसको केवल अपना कहकर
अह सदा अविकार पलेगा
किसके बल पर कम-पथो पर
दृढता मय निर्वाध चलेगा

कहा प्रणय के अडिग सहारे
उसे मिलेंगे तरणी बनव र
कौन व्यथा का भारी वोझा
उससे लेकर शीश धरेगा.

उल्लासो की स्वर लहरी को
नित्य नए स्वर मिल जाएँगे
कौन रुदन का अपनी वीणा मे
सहेज कर तान भरगा

मैं ही रूप छटा छलका
उसकी विवणता मे सुख पाऊँ।
कौन शाति की भुजा वढा
विखरे मानव का त्रास हरेगा

उड जाते ह शुक-पिक सारे
वैभव के दाने चुग-चुग कर
उस एकान्त शिविर की कसे
भावुकता पर नीव वनाऊँ

जीवन साथी हूँ कैसे,
प्रिय का यह रूप कभी सह पाऊँ।
जन्म-जन्म आश्रित-आश्रय वन
अर्द्धांगिनी का रूप जगाऊँ,

क्या अपना अस्तित्व मिटाऊँ ?



साझे की लाश

एक प्रतिष्ठा सोई नगर की
अपने महलों के आगन मे

ऊँची लाल हवेली रोई
दर रोये और देहरी रोई
तोषक रोये गद्दी रोई
काली भीम तिजोरी रोई

क्षीण काय जीवन साथी की
चरमर होती हड्डी रोई
कहाँ चला है यह निर्माता
किए किसी के और हवाले

एक प्रतिष्ठा सोई नगर की
अपने महलो के आगन मे

सारे रिश्ते नाते आये
बेटी आई जमाते आये
दूर दूर से बेटे आये
देकर वायुयान किराये

सभी पहुँचना चाह रहे थे
एक कदम सबसे ही आगे
ना जाने क्या बात कही हो
मरते समय किसी के आगे

आते ही माता से लिपटे
बोल पिता क्या कह कर सोये
किस बेटे को याद किया था
किसका मोह जगाकर रोये

नहीं लाडलो नही, शात थे वे
कुछ यू अपने मे खोये
दद न कोई उभरा उनका
रहे हाय सोये क सोय

कोई बात नही है, पुनो
मैं जो हू अब साथ तुम्हारे
मुझे शान्ति इसमे ही बस
कतव्य निभाए जग के सारे

मुझे याद है जब अपने हाथो
मे हमने महल बनाये
पर मन्दिर मे शीश झुकाकर
ही सूना आगन भर पाये

राम लखन से चारो भाई
मागे थे क धा देने को
अब वह दिन आया है प्यारो
उठो सहारा दे देने को

युग युग तक साम्राज्य मनाया
सीमाए यश रजित कर दी
चार भाग कर अतुल राशि के
लक्ष्मी जीवन रहने तज दी

पूरी उम्र करी हो जिसने
उसके लिये नही रोते है
जीवन के ब धन के साथी
भी इन उमगो मे खोते है

मैंने कब व समझा लाला जी
लाला ने कब भाई न समझा
लो मेरे जीते जी ही यह
खत्म हुआ जीवन का साझा

कहलाता मैं था मुनीम ही
पर मुझ से बातें करते थे
जब जब कुछ भी नया सोचते
थे या कभी नया करते थे

अन्तिम रीत निभाने आया
भाई का सा भाव लिए ही
बहुत दे गये हो तुम दाता
जो कुछ सालो और जिया भी

भाव बह गये एक ओर को
प्रेम रह गया आखे फाड़े
धीरे धीरे आने पर जब
लिये गये वे हाथो आड़े

लगे बनाने आखिर खाता
लाला जी की शव यात्रा का
हाथ कापता था सबूत था
जैसे अन्तिम सेवाओ का

हाँ मुनीम जी ! यह हिसाब कुछ
कम हो सकता है क्या बोलो
मेरे पास न चौथाई है, उन
तीनो को जरा टटालो

वो तो कहते ह हुजूर हम
जल्दी जल्दी मे आए है
रीत निभा ले बडे भाई जी
दे देंगे हम जो लाए है

सुकडी सिमटी मा ने तब
बूढे पडित से यह कहलाया
क्यो रो रो कर देर कर रहे
दुखी हो रही इनकी काया

पहुचे वहाँ पुजारी जी तब
कमर मे सरगर्मी सी थी
किसको क्या करना है, माँ
अब पहने किसके पास रहेगी

आपस मे झगडे नही निबटे
समय बीतता था प्रयाण का
डाली इड, कपडे का था, पता
नहीं, ना था विमान का

घट, घडियल, च वर डुलाने
का बच्चे आतुर बैठे थे
देख आये थे दृश्य कही यह
तब से ही व्याकुल बैठे थे

पूछें किससे क्या-क्या होगा
सभी परेशान मुह बैठे थे
कुछ जन आकर चले गये थे
कुछ मन मार के बैठे थे

कानाफूसी बाहर भी थी
क्या होता है इनके घर मे
कोई न कुछ बतलाता ही है
कोई न करता ही है धरम

न जाने कब मातम उठे
कब घर आ आराम
मुझे बहुत ही लगती है
क्या हम इतने ... म

दीवारो के कान कहाते
इसीलिए सब चुप हो जाते
पर बूढी आखो से मन के
भाव नही छिप कर रह पाते

रह न सके बूढे मुनीम जी
पोथे पत्रे ले कर आए
मालिक तुम समझो समझाओ
हम इतने मे घर हो आए

माग तिजोरी की चाबी, माता
से, कुछ सकेत किया था
जब वह चिंतित सी बोली
चुप रहने का आदेश दिया था

और गए अपने घर अपनी
सभी जमा पूजी लाने को
उलटा पुलटा कुछ समझाया
घर वाली को बहलाने को

मोह द्रव्य का छूट चुका था
वितरण का भय छूट चुका था
जीते जी आकर्षण नगरी
का गठबन्धन रूठ चुका था

अपने बेटो के हित जोडी
माया उन्हे काटने आई
रखकर भीम तिजोरी मे सब
चाबी चारो को पकडाई

मिलते ही चाबी चिल्लाए
पहले से तुम सोये थे क्यो
पहले ही यह बात बताते
इतनी झक-झक होती ही क्यो

सुकडी सिमटी माँ ने तव
बूढे पडित से यह कहलाया
क्यो रो रो कर देर कर रहे
दुखी हो रही इनकी काया

पहुचे वहाँ पुजारी जी तव
कमरे में सरगर्मी सी थी
किसको क्या करना है, माँ
अव पहले किसके पास रहेगी

आपस के झगडे नही निवटे
समय वीतता था प्रयाण का
डोली डडे, कपडे का था, पता
नही, ना था विमान का

घटे, घडियल, च वर ड ुलाने
को वच्चे आतुर वैठे थे
देख आये थे दृश्य कही यह
तव से ही व्याकुल वैठे थे

पूछें किससे क्या-क्या होगा
सभी फुलाए मुँह वैठे थे
कुछ जन आकर चले गये थे
कुछ मन मारे से वठे थे

कानाफूसी वाहर भी थी
क्या होता है इनके घर मे
कोई न कुछ वतलाता ही है
कोई न रोता ही है घरमे

न जाने कव लाश उठेगी
कव घर जा आराम करेंगे
लूएँ बढती ही जाती है
क्या हम इसके साथ मरेंगे

दीवारो के कान कहाते
इसीलिए सब चुप हो जाते
पर बूढी आखो से मन के
भाव नही छिप कर रह पाते

रह न सके बूढे मुनीम जी
पोथे पत्रे ले कर आए
मालिक तुम समझो समझाओ
हम इतने मे घर हो आए

माग तिजोरी की चावी, माता
से, कुछ सकेत किया था
जब वह चिंतित सी बोली
चुप रहने का आदेश दिया था

और गए अपने घर अपनी
सभी जमा पूजी लाने को
उलटा पुलटा कुछ समझाया
घर वालो को बहलाने को

मोह द्रव्य का छूट चुका था
वितरण का भव छूट चुका था
जीते जी आकर्षण नगरी
का गठबन्धन रूठ चुका था

अपने बेटो के हित जोडी
माया उन्ह काटने आई
रखकर भीम तिजोरी मे सब
चावी चारो को पकडाई

मिलते ही चावी चिल्लाए
पहले से तुम सोये थे क्यो
पहले ही यह बात बताते
इतनी झक-झक होती ही क्यो

यह हम सभी जानते थे
दूरदेशी हैं पिता हमारे
अपनी किरिया के हिसाब में
नही रहगे किसी सहारे

जो इस वक्त लगा भी देते
उगरावी मुश्किल से होती
और जरा सी बात बढाते
तो अम्मा फिजूल में रोती

बडे भाई ने चाबी डाली
मझले ने हैंडल सरकाया
सयले ने खोला किवाड
छोटे ने खीचो बाहर माया

"लो मुनीम जी ! कारिन्दो से
कहो, न कुछ अब देर लगाए
होती हैं जो रीत, बडो से
कहो, जरा जल्दी बतलाए"

काम सभी चल पडे, उडे वह
नोट कि ज्यो पछी उडता है
सच्चा सेवक बैठा बैठा
अपने ही शव पर हसता है

ऐसे कर्मवीर दानी की
अतिम दिन यह नौबत आई
क्या मुझको भी चदा दे न
सकेंगे मिलकर चारो भाई



मुस्कान तुम्हारी प्यारी है

पहली बार कहा तुमने मुस्कान तुम्हारी प्यारी है
बरसों बाद मिली हो पर यह छवि सब से ही न्यारी है

दूजी बार कहा पूछूं क्या आयु कहाँ रख आई हो
सब पर बीत रहे दिन केवल तुम कैसे बच पाई हो

और तीसरी बार कहा तुमसे जब बातें करता हूँ
लगता है नारी की सौम्याकृति में गुजन भरता हूँ

चौथी बार कहा है यह जो मैं सुनने को आतुर थी
आखिर जान लिया वह सब जो मैं कहने को आतुर थी

शाति स्वरूपा हूँ यह सच है मुझे न जग से चाहत है
जो कुछ भी दे पाई दिया है दे दूंगी यह राहत है

अर्पण का सुख ही मेरे आनन पर खुलकर आन बसा
नही जानते हो क्या तुम इसमे अद्भुत है एक नशा

इसी अवस्था में सुख दु ख की सभी लहर सम हो जाती
हास सटे रहते होठो से आँखें चमक चमक जाती

जीवन का निस्सार किसी ने किसी रूप में बाध लिया
समझो जी लेने का उसने एक नया आधार लिया

यो मन्जिल की ओर सरकते जाना ही तो मन्जिल है
मजिल पाने का सुख मेरे कदम कदम की मजिल है

और सभी पालेता है जो वह कैसा हो जाता है
जैसे जीवन चलता है बस क्योकि जगत से नाता है



कही अपरिचित

कहो अपरिचित मिलता है तो मैं उदास हो जाती हूँ
परिचय की परिभाषा के तब अपने व्यास बढाती हूँ

क्या परिचय है वही जिसे मैंने सोचा या जाना हो,
हो सकता है किसी और के लिए वही अनजाना हो

क्यो मैं अपनी झाकी ही सबमें सभी में खोज रही
कभी कभी लगता है मुझमें यही प्रेरणा रोज रही

सभी बने अपनी माटी के अपने गुण सस्कारो से
जीवन भर की झेलो भोगी कुछ जीतो कुछ हारो से

जिनको केवल छू पाना भी मेरे वश की बात नही
क्याकि कभी कुछ और रहा है और रहा कुछ और कही

माना रूप रग सम्बन्ध सभी का लू विश्लेपण कर
पर क्या उसके घटज भाव को मन मे कभी सकूगी भर

जब तक आत्म रूप ही होकर मैं न कही समता पाऊँ
सभी अपरिचित सदा लगेगा जहा जहा भी मैं जाऊँ

मेरा यो उदास हो जाना तब नितात स्वाभाविक है
परिचय की परिभाषा जब मेरी इतनी सर्वाहिक है



विश्वास की परिणिति

तुम मेरे विश्वास को विश्वास मे परिणित करोगे
तो हृदय से फेंक दूगी सब विवशताएँ जगत की

दीन हूँ पर आत्म का सम्मान अधरो की सुनिधि है
हूँ स्वय के हेतु किंचन ताप पर तेरे हरुगी

स्थिर नयन से वेध भू आकाश की वह सीम रेखा
कामना के पुष्प ला तेरी चरण रज पर धरूँगी

छेड कर जो तार जग उठती सभी सोती प्रथाएँ
उन सुरो की मर्मवेधी तान का आश्रय गहूगी

केन्द्र कर अस्तित्व तेरा शून्य कर मम का अँधेरा
लोप कर आकृति स्वय की सत्तचित् आनद वरूँगी

विश्व का वैभव जहाँ उपमान बनकर तुल न पाता
उस जलधि की कोख से ले एक मुक्ता कण तरूँगी

और जो विश्वास को विश्वास की परिणिति न दोगे
तो नियति को दृश्य निज को नियति कहकर टाल दूगी



मेरे पैर छुए तूने

मेरे पैर छुए तूने

निधन हूँ, निबल हूँ, बेबस
लाचारी की प्रतिमा हू
मेरे पैर छुए तूने

दे न सकूगी तुझे आज कुछ
इसका मुझ पर भार बढाकर
क्या मिल गया तुझे यह पाकर
झुक कर, मेरे नैन झुकाकर

यह सत्कार दिया तूने
मेरे पैर छुए तूने

सारा ही ब्रह्माण्ड पडा था
दाता का भी हाथ बडा था
कहाँ कमी थी कुछ पाने की
धुन थी कैसी लय लाने की

जो यह भाव गढा तूने
मेरे पर छुए तूने

मैं तो केवल इसी मत्य
ससृति का एक खिलौना हूँ
उडता फिरता सेमल शिशु
झझा के हाथ ठगौना हूँ

कैसा व्यास दिया तूने
मेरे पैर छुए तूने

आत्म नमन के फूल, इन्हें
देता इनके अधिकारी को
तू पहचान नहीं पाया
मुझ प्रतिमा की लाचारी को

इनको व्यर्थ किया तूने
मेरे पैर छुए तूने



वेदान्त कसौटी

तब तुम आजाना एक बार
जब सरस्वति हो मेरे मुख पर
जब जागे तुझमे सशय स्वर
तब तुम आ जाना एक बार

सासारिक वाद विवादो को
वेदान्त कसौटी पर कसकर
साधन का रूप साधना कर
मैं कर पाऊँ उत्तर प्रसार

तब तुम आ जाना एक बार

जब हृदय महत् हो ले उडान
कर पचतत्व की परिधि पार
स्वर हो जब केवल तत्वज्ञान
लौकिक रगायन कलाकार

तब तुम आ जाना एक बार

जब जग प्रवचना से थककर
डूबे बोझिल मानस तेरा
हो शक्ति क्षीण विश्वासो की
ले कूल भँवर के रूप धार

तब तुम आ जाना एक बार

तब तृप्त कर सकूंगी तुझको
जब भूख तुझमें जागेगी
जो तेरी तृष्णा मांगेगी
वह दूंगी करके रसाकार

तब तुम आजाना एक बार



थी असहाय अवस्था मेरी

थी असहाय अवस्था मेरी

एक हाथ ने बढकर मेरे
दु ख रोले सुख सहलाया
कितने बुझे हुए दीपो को
स्नेह् बात से दोहराया

सासारिक नियमो का जिसको
कुछ भी ध्यान नही आया
क्या करता मानव मन मेरा
उसका भूल नही पाया

जीवन बहुत बडा है छोटा
बहुत यही है कभी कभी
सभी मिला करते हे इसमे
यही कही या कही कभी

कुछ प्रतीक होते जीवन के
कुछ होते उपकरणो के
कुछ साये खोकर लगता है
कुछ भी हाथ नही आया

कौन किसी की धुन मे रत है
है अवकाश कहाँ इतना
तोल रहा है जग सारा
पलडा हलका भारी कितना

दो पल का जो साम्य कही है
जाने या अनजाने से
उसका मूल्य पकडकर मैंने
सब कडवापन नहलाया

नियम बधनो से कीमत से
नही भावना बध पाई
स्पर्श सुखो से कब तरग की
एक ग्रथि भी खुल पाई

मन का नीलाकाश भँवर मे
कभी न सिमटेगा आकर
व्यर्थ प्रदर्शन ने प्रयास यह
बार बार ही दोहराया,

जिसका भेद न खुल पाया।



मै सीपो मे दो मोती लिए

मैं सीपो मे दो मोती लिए विदा होता हूँ
चचल पुतली मे जडता लिए विदा होता हूँ

जीवन मे आया था तेरे मुस्काने को
कुछ अपने दुदम ताप कभी वहलाने को
सूनी रीती कसकें मन की, भरमाने को
तुम से लेकर कुछ तुझको भेंट चढाने को

मैं वो अपराधी घडिया लिये विदा होता हूँ
मैं सूखे होठ अकम्पित लिये विदा होता हूँ

घुघराली अलकें मत सहलाना जाते मे
भोलापन मेरा मत दोहराना जाते मे
अपनेपन का मत पाठ पढाना जाते मे
निष्ठुरता को मत आग लगाना जाते मे

मैं उलझे उलझे सम्बल लिए विदा होता हूँ
मैं सुलझे सुलझे बन्धन लिए विदा होता हूँ

सूनी झोली मे स्नेह भरे कुछ स्पन्दन ह
जीवन लेकर भी जो मेरा जीवन धन है
पथ-साथी, तेरी तानें, मेरे क्रन्दन है
सुधि सपनो से आलोकित दिशि के गुजन हैं

मैं ये स्मृतियो के पकज लिये विदा होता हूँ
मैं अपने से अपनापन लिये विदा होता हूँ

□

मै उदास थी वहुत

मैं उदास थी वहुत-वहुत थी कई दिनों से,
आखे भी कुछ धँसी-धँसी मुस्करा रही थी
जीवन के उत्साह शिशिर मे वँधे पडे थे
पोरो मे ठण्डी सुलगन सरसरा रही थी,

अन्त न था जीवन का इच्छाओ का ही था
जीते जी ही मृत्यु दृश्य यह दिखा रही थी
कैसे शिथिल अग हो जाते उसमे खोकर,
दुलराकर, कर प्यार, यही सब बता रही थी

टन-टन टन की, ध्वनि धूमिल कानो मे आई
सुप्त करो ने दूरभाग्य को छू पाया था
कौन बोलता है मृतप्राय किसी प्राणी से
मन ही मन यह प्रश्न अनेक बार आया था,

बोले तुम, क्या तुम ही हो, क्या सच तुम ही हो ?
अन्तर ने कब कानो पर विश्वास किया था
कहाँ व्यर्थ जीवन को इतना मान मिलेगा !
पर यह सच था, बिल्कुल सच था, यही हुआ था

ना जाने तुमने क्या कहा न जाने मैंने
उन बातो का उत्तर भी साकार दिया था
बस इतना है ज्ञात कि तेरी उन बातो से
मेरी हृत्तन्त्री का कोई तार हिला था,

गूजी मन्दिर मे प्रतिध्वनियाँ शख बज उठे
टनटन की आवाज घटियो मे खोई थी

मौन पुजारी मूक देवता मुखर हो उठे
रागों में स्वर्गीय प्रभा झिलमिला उठी थी

नर्तन करता मन मयूर घुंघरू प्राणों में,
अंग अंग पारंगत् नृत्यकला चिरंतन थे
बनी देवदासी छोटी सी उन्हीं स्वरों की
जिनमें मेरे ही जीवन के श्वास भरे थे,

श्वासों में छा गई सुरभि थी धूप दीप की
बन्द दृगों की कोर अल्पना [illegible] थे
धूमिल गोधूली [illegible] सुवासिन वेला
आँगन स्वीकृत करने स्वयं कपाट खुले थे

स्वप्नों का साकार धरा पर रूप आया था,
सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम्, नाते उभर रहे थे
देव स्वयं पूजा गृह में [illegible] से उठकर
अपने हाथों श्रीफल मिश्री बांट रहे थे।

कितने ही दिन बीत चुके हैं उस घटना को,
पर न शिथिलता फिर अंगों में कभी आई
अब भी नहीं कहीं पर कुछ भी इस जीवन में
आह्लादों से एक बार की वही सगाई

कैसा सुन्दर [illegible] था वह सब जिसमें आज
आनन्द में भी मूक धरा पर [illegible] रहे हैं
उस अतीत की मादक [illegible] को [illegible] पर,
[illegible] से आनामी [illegible] हैं

तब मेरे पास चले आना

तब मेरे पास चले आना

जब एक बार कसकर मुझको
कह सके कि सुन, यह बात नही
दु ख देने वाले यह प्रसग
सब झोके हैं आघात नही

तब मेरे पास चले आना

जब तक तुझमे सकोच बना
यह दुनिया भर का सोच बना
तब तक कैसे मैं भी दे दू
सिहरन का साया घना-घना

जब तक तेरा मन भिक्षुक बन
झोली न यहां फैलाएगा
तब तक मेरा उदार मन भी
कैसे सब कुछ दे पाएगा

मन का दपन उज्ज्वल कर जब
छवि का प्रतिबिंब निहार सके
जब तेरी दृष्टि अगम् को छू
आगत् के पख पखार सके

तब मेरे पास चले आना

तू ज म-जन्म मेरा है पर
अन्तर की तेरी चाहत है

मौन पुजारी मूक देवता मुखर हो उठे
रागो मे स्वर्गीय प्रभा झिलमिला उठी थी

नर्तन करता मन मयूर घुघरू प्राणो के,
अगअग पारगत् नृत्यकला थिरकन थे
बनी देवदासी छोटी सी उन्ही स्वरो की
जिनमे मेरे ही जीवन के श्वास भरे थे,

श्वासो मे छा गई सुरभि थी धूप दीप की
बन्द दृगो की कोर अल्पना माट सजे थे
धूमिल गोधूली नक्षत्र सुवासित वेला
अचन स्वीकृत करने स्वय कपाट खुले थे

स्वप्नो का ससार धरा पर झुक आया था,
शाश्वत्, चरम्, पुरातन, नाते उभर रहे थे
देव स्वय पूजा गृह के बन्धन से उठकर
अपने हाथो श्रीफल मिश्री बाँट रहे थे।

कितने ही दिन बीत चुके हैं उन बातो को,
पर न शिथिलता फिर अगो मे वैसी आई
अब भी नही कही पर कुछ भी इस जीवन मे
आल्हादो से एक बार थी वही सगाई

कैसा सुखद सत्य था वह अब जिसके आगे
आगत के भी मूल्य धरा पर ढुले पडे है
उस अतीत की मादक स्वर-लहरी की धुन पर,
फीके-फीके से आगामी गीत पडे है



तब मेरे पास चले आना

तब मेरे पास चले आना

जब एक बार कसकर मुझको
कह सके कि सुन, यह बात नही
दु ख देने वाले यह प्रसग
सब झोंके हैं आघात नही

तब मेरे पास चले आना

जब तक तुझमे सकोच बना
यह दुनिया भर का सोच बना
तब तक कैसे मैं भी दे दू
सिहरन का साया घना-घना

जब तक तेरा मन भिक्षुक बन
झोली न यहा फैलाएगा
तब तक मेरा उदार मन भी
कैसे सब कुछ दे पाएगा

मन का दपन उज्ज्वल कर जब
छवि का प्रतिबिब निहार सके
जब तेरी दृष्टि अगम् को छू
आगत् के पख पखार सके

तब मेरे पास चले आना

तू जन्म-जन्म मेरा है पर
अन्तर को तेरी चाहत है

होठो पर तेरा नाम मगर
कम्पन को तेरी चाहत है

तू जितना पास दूर उतना
होता जाता व्यवहारो मे
तब लीक सजग हो मौन रुदन
रोतो आकुल अभिसारो मे

जब हो निर्द्वंद तरुण सा मन
पर्वत की ओर निहार सके
जब स्निग्ध चारु चपला मुख से
बन्धन के बोझ उतार सके,

तब मेरे पास चले आना

जब ज्वार शात हो जीवन का
जब प्रलय मिटे तेरे मन का
या बुद्ध कोई आकर कह दे
"तब मेरे पास चले आना"

तब मेरे पास चले आना

▭

• • •

٢